ओं

पञ्चस्तवी ।

लघुस्तवः प्रथमः ।

ओंनमस्त्रिपुरसुन्दर्यै

ऐन्द्रस्येव शरासनस्य दधती मध्येललाटं प्रभां ।
शौक्लीं कांत मनुष्णगोरिव शिरस्यातन्वती सर्वतः ॥
यासौ त्रिपुरा हृदि द्युतिरिवोष्णांशोः सदाहः स्थिता ।
छिन्द्यान्नः सहसा पदैस्त्रिभिरघं ज्योतिर्मयी वाङ्मयी ॥१॥

इन्द्र धनुष जैसी दीप्ति जिसके ललाट के मध्य में प्रकाशित है॥ चन्द्रमा की भांति जिसके शिर के चारों और श्वेतवर्ण चन्द्रिका चमकती है॥ और जिसके हृदय में प्रति दिन चमकती हुई सूर्य की जैसी दीप्ति शोभित है॥ वही यह माता त्रिपुरा हमारे हृदय गत त्रिमलात्मकपापों को तीनपदों के अनुग्रह से शीघ्रही नाशकरे॥ पहले तीन पदों में तीन बीजों के नाम स्थित हैं॥ और इनका उच्चारण गुर मुख से सुन कर फल दायक होता हैं॥ १॥

या मात्रा त्रपुसीलतातनुलसत्तन्तूत्थितिस्पर्धिनी ।
वाग्बीजे प्रथमे स्थिता तव सदा तां मन्महे ते वयम् ॥
शक्तिः कुण्डलिनीति विश्वजननव्यापारबद्धोद्यमां ।
ज्ञात्वेत्थं न पुनः स्पृशन्ति जननीगर्भेऽर्भकत्वं नराः ॥ २ ॥

जो शक्ति कला तुम्हारे प्रथम वाग्बीज (ऐ) में ठहरी हुई है ॥ उसका हम साधक राँगा नाम बेल की भाँति विकसी हुई सूक्ष्म तार से स्पर्धा (मुकाबला) करती हुई सदा मानते हैं ॥ और उसी कुण्डलिनी शक्ति को जो मनुष्य जगत की उत्पत्ति के व्यापार में तत्पर ऐसा जानते हैं ॥ वह दुबारा माता के उद्दर में गर्भ नहीं पाते है ॥ किंतु मोक्षपद को पाते हैं ॥ २ ॥

दृष्ट्वा संभ्रमकारि वस्तु सहसा ऐ ऐ इति व्याहृतं ।
येनाकूतवशादपीह वरदे बिन्दुं विनाप्यक्षरम् ॥
तस्यापि ध्रुवमेव देवि तरसा जाते तवानुग्रहे ।
वाचः सूक्तिसुधारसद्रवमुचो निर्यान्ति वक्त्राम्बुजात् ॥ ३ ॥

हे वरदे जिस किसी पुरुष ने किसी भयदायक वस्तु को अचानक देखकर बिन्दु (अनुस्वार) रहित ऐ ऐ इस बीजाक्षरको तत्क्षणात् उच्चारण किया तो हे देवि! उस पुरुष को निश्चय करके शीघ्रही तुम्हारे अनुग्रह के उदय होने पर अच्छी वचन रुपी अमृतधारा यें मुख कमल से निकल जाती हैं अर्थात आपकी दया दृष्टि से वह अलौकिक विद्वान बनता है

[illegible]ये ! तव कामराजमपरं मन्त्राक्षरं निष्कलं ।
[illegible]सारस्वतमित्यवैति विरलः कश्चिद्बुधश्चेद्भुवि ॥
[illegible]ख्यानं प्रतिपर्व सत्यतपसो यत्कीर्तयन्तो द्विजाः ।
[illegible]रम्भे प्रणवास्पदप्रणयितां नीत्वोच्चरन्ति स्फुटम् ॥४॥

हे नित्ये ! सदा स्वरुप में रहने वाली जो तुम्हारा दूसरा मंत्राक्षर "काम राज बीज" क्लीं नाम का है ॥ वही ककार लकार रहित सारस्वत बीज कहलाता है ॥ इस बीज को कोई विरल बुद्धिमान पुरुष ही जानता है ॥ ब्रह्म वित ब्राह्मण पर्व दिनों पर सत्य तपसा नाम के ऋष की कीर्तना करते हुये ओंकार के बदले बडी प्रशंसा से सारस्वत बीज का उच्चार करते हैं ॥ अर्थात् ओंकार के स्थान पर सरस्वती बीज का ही उच्चारण करते हैं ॥ ४ ॥

यत्सद्यो वचसां प्रवृत्तिकरणे दृष्टप्रभावं बुधै- ।
स्तार्तीयीकमहं नमामि मनसा त्वद्बीजमिन्दुप्रभम् ॥
अस्त्वौर्वोऽपि सरस्वतीमनुगतो जाड्याम्बुविच्छित्तये ।
गोशब्दो गिरि वर्तते स नियतं योगं विना सिद्धिदः ॥५॥

बुद्धिमानोंने जिस तुम्हारे चंद्रमा के समान प्रकाशमान तीसरे बीज के प्रभाव को वाणी से शीघ्र प्रवृत्त करनेके लिये देखा है। उसको मैं नमस्कार करता हूं ॥ वाडवाग्नि भी सरस्वती नदी केसाथ मिलकर पानी की ठण्डक दूर करने के तत्पर होवे परन्तु गो शब्द का अर्थ वाणी है। जो नित्य योग वा ध्यान के विना ही सिद्धि देने वाला है। अथवा (औः) बीज सरस्वती बीज जान कर उच्चारण किया जाय तो बुद्धि के जाड्य का नाश हो जाता है ॥ ५ ॥

एकैकं तव देवि बीजमनघं सव्यञ्जनाव्यञ्जनं ।
कूटस्थं यदि वा पृथक्क्रमगतं यद्वा स्थितं व्युत्क्रमात् ।
यं यं काममपेक्ष्य येन विधिना केनापि वा चिन्तितं ।
जप्तं वा सफलीकरोति सहसा तं तं समस्तं नृणाम् ॥६॥

हे देवि! तुम्हारे शुद्ध बीज को एक एक करके (क से लेके क्ष तक) व्यञ्जन सहित वा व्यंजन रहित (स्वरमय) अ से लेके अः तक इकठ्ठा वा पृथक पृथक, क्रम सहितवा व्युत्क्रम विपरीत क्रम से जो ठहरा हुवा हो। जिस जिस कामना को जिस किसी ने जिस जिस अपेक्षा से वा जिस जिस विधि से स्मरण किया वा जपा, उन मनुष्यों को वह वह कामना ततक्षण सफल करदेती हो ॥ ६ ॥

[illegible]स्तकधारिणीमभयदां साक्षस्रजं दक्षिणे ।
भक्तेभ्यो वरदानपेशलकरां कर्पूरकुन्दोज्ज्वलाम् ।
उज्जृम्भाम्बुजपत्रकान्तनयनस्निग्धप्रभालोकिनीं ।
ये त्वामम्ब न शीलयन्ति मनसा तेषां कवित्वं कुतः ॥७॥

हे माता! जो पुरुष तुमको अभय देने हारी पुस्तक वाम हाथ में लिये और भक्तों के मनोरथ पूरण करने वाली अक्षमाला दक्षिण हाथ में लिये; कर्पूर और कुन्द पुष्प की भांति धवल विकसित कमल के [illegible] जैसे मनोहर नेत्र वाली; प्रकाश और अह्लादमय दृष्टि वाली इस प्रकार जो मन से स्मरण नहीं करते हैं। उन पुरुषों को [illegible] शक्ति कहां से प्राप्त होती है। अर्थात नहीं होती है ॥ ७ ॥

ये त्वां पाण्डुर पुण्डरीक पटल स्पष्टाभिरामप्रभां।
सिञ्चन्तीममृतद्रवैरिव शिरो ध्यायन्ति मूर्ध्नि स्थिताम्।
अश्रान्तं विकटस्फुटाक्षरपदा निर्याति वक्त्राम्बुजा-
त्तेषां भारति! भारती सुरसरित्कल्लोललोलोर्मिवत्॥ ८॥

जो भक्त तुमको श्वेत कमलों के समूह के समान बहुत मनोहर दीप्ति वाली और धारासार अमृत वर्षा सिर पर सींचती हुई को ललाट में स्थित स्मरण करते हैं, उनके मुख कमलों से, हे सरस्वती! ब्रह्म शक्ति स्वरूपिणि! गुण युक्त अक्षर और अर्थसहित शब्द गंगा जी के चंचल लहरों के समान अनायास से ही निकलते हैं॥ ८॥

सिन्दूर पराग पुञ्ज पिहितां त्वत्तेजसा द्यामिमा-।
मुर्वी चापि विलीनयावक रस प्रस्तारमग्नामिव॥
पश्यन्ति क्षणमप्यनन्यमनसस्ते षामनङ्गज्वर।
क्लान्तास्त्रस्त कुरङ्ग शावकदृशो वश्या भवन्ति स्फुटम् ६

जो पुरुष तुम्हारे तेज के प्रभाव से इस आकाश को सिंदूर की धूलि के समूह से व्याप्त और पृथिवी को भी पिगले लाक्षारस के विस्तार में मग्न, एकाग्र चित से क्षण मात्र में देखते हैं। उन पुरुषों को काम देव के ज्वर से तप्त और भीत मृग के शावक समान कोमल नेत्र वाली अंतर शक्तियां(वृत्तियां)प्रकट रूपसे वश हो जाती हैं॥६॥

वल्गत्काञ्चन कुण्डलाङ्गदधरामा बद्धकाञ्चीस्रजं ।
ये त्वां चेतसि तद्गते क्षणमपि ध्यायन्ति कृत्वा स्थितिम् ॥
तेषां वेश्मसु विभ्रमादहरहः स्फारीभवन्त्यश्चिरं ।
माद्यत्कुञ्जर कर्णतालतरलाः स्थैर्यं भजन्ते श्रियः ॥१०॥

जो भक्त जन सावधान चित वाले देदीप्यमान स्वरन के कुंडल बुजा बंध और रशनासूत्र धारण करणे वाली आपको स्मरण करते हैं। उन भक्तों के घरों में प्रति दिन विलास करती हुई मद से मतवाले हाथी के स्वर्णाकार कानों की भांति चंचल लक्ष्मी चिर काल त स्थिति करती है ॥ १० ॥

आर्लब्धा शशिखण्ड मण्डितजटाजूटां नृमुण्डस्रजं ।
बन्धूक प्रसवारुणाम्बरधरां प्रेतासनाध्यासिनीम ॥
त्वां ध्यायन्ति चतुर्भुजां त्रिनयनामा पीनतुङ्गस्तनीं ।
मध्ये निम्नवलित्रयांकिततनुं त्वद्रूपसंवित्तये ॥ ११ ॥

आनंद रस पूर्ण चंद्र कला से अलंकृत, जटाजूट वाले, कपाल माला को धारण करणे वाले, जपा कुसम के समान लाल वस्त्र धारण करणे वाले, प्रेतासन पर स्थिति करती हुई चार बुजा और तीन नेत्र वाले, मोटे स्तन वाले, मध्य भाग में गहरे तीन रेखावों के चिहन सहित शरीर वाले स्वरूप को जानने के लिये भक्त जन ध्यान करते हैं ॥ ११ ॥

जातोऽप्यल्पपरिच्छदे क्षितिभुजां सामान्यमात्रे कुले ।
निःशेषावनि चक्रवर्तिपदवीं लब्ध्वा प्रतापोन्नतः ॥
यद्विद्याधरवृन्दवन्दितपदः श्रीवत्सराजोऽभव- ।
द्देवि! त्वच्चरणाम्बुज प्रणतिजः सोयं प्रसादोदयः ॥१२॥

हे देवि! एक श्री वत्सराजा नामी साधारण राजावों में उत्पन्न हुवा ॥ छोटे परिवार और सामान्य कुल में उत्पन होने पर भी वह तुम्हारे प्रणामों से उपजित महान प्रताप से सारी पृथिवी के चक्रवर्ति पदवी को प्राप्ति हुवा ॥ और विध्धाधर नाम के देवता उसके पादों की स्तुति करणे लगे ॥ यह सब तुम्हारे अनुग्रह का प्रभाव है ॥ १२ ॥

चण्डि त्वच्चरणाम्बुजार्चनविधौ बिल्वीदलोल्लुण्ठन- ।
त्रुटयत्कण्टक कोटिभिः परिचयं येषां न जग्मु कराः ॥
ते दण्डांकुश चक्र चाप कुलिश श्रीवत्स मत्स्यांकितै- ।
र्जायन्ते पृथिवीभुजः कथमिवाम्भोजप्रभैः पाणिभिः॥१३॥

हे चंड मुंड को मथने वाली चण्डि! तुम्हारे चरण कमलों की पूजा विधान में जिन पुरुषों के हाथ बिल पत्रों के चुन्ने के लिये उनके कांटों के अग्र भाग से न छोवें तु वह दण्ड अंकुश, चक्र, चाप, धनुष, श्रीवत्स और मछली के चिहन सहित कमल समान हाथ वाले राजे कैसें उतपन्न होवें ॥ १३ ॥

विप्राः क्षोणिभुजो विशस्तदितरे क्षीराज्यमध्वासवै ।
स्त्वां देवि! त्रिपुरे! परापरमयीं सन्तर्प्य पूजाविधौ ॥
यां यां प्रार्थयते मनः स्थिरधियां तेषां त एव ध्रुवं ।
तां तां सिद्धिमवाप्नुवन्ति तरसा विघ्नैरविघ्नीकृताः ॥१४॥

हे देविः त्रिपुरे ! ब्रह्मण क्षत्रिय वैशय और शुद्र, दूध, घी मधु (शहद) और शराव से तुम परापर स्वरुप को पूजा विधान में तृप्त करते हैं॥ उनही निश्चल बुद्धि साधकों के मन जिस २ सिद्धि की याचना करते हैं ॥ वह उस उस सिद्धि को निश्चय करके झट पट निर्विघ्न होकर पाते हैं ॥ १४ ॥

शब्दानां जननी त्वमत्र भुवने वाग्वादिनीत्युच्यसे ।
त्वत्तः केशव वासव प्रभृतयोऽप्याविर्भवन्ति स्फुटम् ॥
लीयन्ते खलु यत्र कल्पविरमे ब्रह्मादयस्तेप्य मी ।
सा त्वं काचिदचिन्त्यरूपमहिमा शक्तिः परा गीयसे॥१५॥

हे त्रिपुरे ! तीन भुवनों में अकार से क्षकार तक जितने वर्ण माला के अक्षर हैं; उनकी तुम माता हो ॥ इस लिये वाग्वादिनी कहलाती हो ॥ तुम से विष्णु इद्र आदि देव निश्चय करके उतेपन्न होते हैं । फिर कल्पान्त में वही ब्रह्म आदि तुम में लय होते हैं वही तुम अमित, अलौकिक, अचिंत्य महिमा के स्वरूप वाली हो और परा शक्ति कहलाती हो ॥ १५ ॥

देवानां त्रितयं त्रयी हुतभुजां शक्तित्रयं त्रिस्वरा ।
स्त्रैलोक्यं त्रिपदी त्रिपुष्करमथो त्रिब्रह्म वर्णास्त्रयः ॥
यत्किञ्चिज्जगति त्रिधा नियमितं वस्तु त्रिवर्गात्मकं ।
तत्सर्वं त्रिपुरेति नाम भगवत्यन्वेति ते तत्त्वतः ॥१६॥

ब्रह्मा विष्णु महेश यह तीन देव। दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य, आहवनीय तीन अग्नि ॥ इच्छा, ज्ञान, क्रिया, तीन शक्तियां, ॥ उदात्त, अनुदात्त, स्वरित, यह तीन स्वर ॥ भूः भुवः स्वः यह तीन लोग, ॥ जालन्धर, कामरूप, उड्डीसा, यह तीन पद । नाभि, हृदय, ललाट, यह तीन पुष्कर, ॥ इडा पिंगला सुषुम्ना अथवा तत् सत् ब्रह्म ये तीन ब्रह्म ॥ ब्रह्मण क्षत्रिय वैश्य यह तीन वर्ण, ॥ तथा जगत में जो कुछ त्रिवर्गात्मक वस्तु विभजित हैं । वहसब त्रिपुरा भगवती के नाम का ही यथार्थ में अनुकरन करते हैं ॥ १६ ॥

लक्ष्मीं राजकुले जयां रणभुवि क्षेमंकरीमध्वनि ।
क्रव्याद द्विप सर्प भाजि शवरीं कान्तारदुर्गे गिरौ
भूत प्रेत पिशाच जम्बुकभये स्मृत्वा महाभैरवीं ।
व्यामोहे त्रिपुरां तरन्ति विपदस्तारां च तोयप्लवे ॥१७॥

त्रिपुरा के नाम स्मरण से ही अभष्टि फल मिलता है। इस लिये लक्ष्मी का स्मरण राज द्वार में ॥ जया का स्मरण रणभूमी में। क्षेमंकरी का मार्ग में ॥ शवरी का स्मरण विषम, दुर्गम पर्वतों और

राक्षस हाथी सर्पक भय के समय। महा भैरवी का स्मरण भूत, प्रेत, पिशाच और सिहम के भय के समय करणा योग्य है॥ त्रिपुरा का स्मरण चित भ्रम के समय॥ तारा का स्मरण पानी के बीच जहाज़ वा नौ में तरने के समय करणा चाहे इस प्रकार संपूर्ण विपदायें दूर हो जाती हैं॥ १७॥

माया कुण्डिलनी क्रिया मधुमती काली कला मालिनी ।
मातङ्गी विजया जया भगवती देवी शिवा शाम्भवी ॥
शक्तिः शङ्करवल्लभा त्रिनयना वाग्वादिनी भैरवी ।
ह्रींकारी त्रिपुरा परापरमयी माता कुमारीत्यसि ॥ १८॥

सर्व स्वतन्त्र शक्ति॥ मूलाधार शक्ति॥ क्रिया शक्ति॥ ज्ञान शक्ति॥ सृष्टि स्थिति संहार शक्ति॥ अमृत कला शक्ति॥ वर्ण माला शक्ति॥ परा शक्ति जय विजय रूपी॥ सर्वऐश्वर्यमती। प्रकाश रूपी। कल्यान रूपी॥ आनन्द रूपी॥ स्वयं शक्ति॥ महादेव कीप्रिया॥ सोम सूर्य अग्नि रूपी॥ वैखरी स्वरूपी॥ भयंकर स्वरूपिणी॥ माया वीज शक्ति॥ इडा पिंगला सुषुम्ना शक्ति॥ स्थूल सूक्ष्म स्वरूपिणी॥ जगत जननी॥ जगत विलासनी॥ यह श्लोक भगवती के महा मंत्र का गर्भ है॥ इसे से ह्रीं, श्रीं, क्लीं, स्तौं, ऐं, पांच वीजाक्षर निकलते हैं॥ १८॥

आईपल्लवितैः परस्परयुतैर्द्वित्रिक्रमाद्यक्षरैः।
काद्यैः क्षान्तगतैः स्वरादिभिरथ क्षान्तैश्च तैः सस्वरैः ॥
नमानि त्रिपुरे! भवन्ति खलु यान्यत्यन्तगुह्यानि ते।
तेभ्यो भैरवपत्नि! विंशतिसहस्रेभ्यः परेभ्यो नमः ॥ १६ ॥

हे त्रिपुरे! आकार और ईकार के संपुट (जोड) को कवर्ण से लेकर क्षवर्ण तक मिलावें॥ फिर स्वर सहित कवर्ण से लेकर क्षवर्ण तक मिलावें॥ इस तरह जो तम्हारे नामों की संख्या जो वन्ती है। वह हे भैरव पत्नि! वीस हजार से अधिक हैं। उनको निश्चय करके मैं नमस्कार करता हों॥ १६॥

बोद्धव्या निपुणं बुधैः स्तुतिरियं कृत्वा मनस्तद्गतं
भारत्या त्रिपुरेत्यनन्यमनसा यत्राद्यवृत्ते स्फुटम्॥
एकद्वि त्रिपद क्रमेण कथितस्त्वत्पाद संख्याक्षरै-
र्मन्त्रोद्धार विधि र्विशेष सहितः सत्सं प्रदाया न्वितः।२०।

विद्वानों को यह त्रिपुरा नाम सरस्वती के स्तोत्र पर एकाग्र-बुद्धि से मन को तन्मय करके विमर्श करना चाहिए॥ जिस स्तोत्र के पहले श्लोक में तुम्हारे पादों की संख्या पहले दूसरे और तीसरे पद वाले अक्षरों के क्रम और मंत्रों के उद्धार की विधि असामान्य गुण सहित और गुरु संप्रदाय सहित कही गई है॥ २०॥

सावद्यं निरवद्यमस्तु यदि वा किंवानया चिन्तया ।
नूनं स्तोत्रमिदं पठिष्यति नरो यस्यास्ति भक्तिस्त्वयि ॥
संचिन्त्यापि लघुत्वमात्मनि दृढं संजायमानं हठा- ।
त्त्वद्भक्त्या मुखरीकृतेन रचितं यस्मान्मयापि ध्रुवम् ।२१।

दोष रहित, हो वा दोष सहित हो, इस चिंता को छोड कर जिस पुरुष को तुम्हारी भक्ति हो वह इस स्तोत्र को पढे ॥ मैं ने भी निश्चय करके बलात्कार तुम्हारी भक्ति के उत्साह से अपने लाघव पन का विचार छोडकर इस स्तोत्र की रचना कियी ॥ २१ ॥

इति श्रीपञ्चस्तव्यां लघुस्तवः ॥

चर्चास्तवो द्वितीयः ।

ॐनमस्त्रिपुरसुन्दर्यै

ॐ आनन्दसुन्दरपुरन्दरमुक्तमाल्यं ।
मौलौ हठेन निहितं महिषासुरस्य ॥
पादाम्बुजं भवतु मे विजयाय मञ्जु ।
मञ्जीरशिञ्जितमनोहरमम्बिकायाः ॥ १ ॥

जिस जगत्माता के पाद कमल पर देवराज ने उत्तम माला अर्पण किई थी ॥ जिस पाद कमल ने महिषासुर के सिर को बलात्कार दवाया है ॥ जों पाद कमल पायजेवों के मनोहर शब्दों से शोभित है । वही मनोहर पाद कमल जगत्माता के मेरे जयका हेतु होवें ॥ १ ॥

सौन्दर्यविभ्रमभुवो भुवनाधिपत्य ।
सम्पत्तिकल्पतरवस्त्रिपुरे जयन्ति ॥
एते कवित्वकुमुदप्रकरावबोध ।
पूर्णेन्दवस्त्वयि जगज्जननि प्रणामा ॥ २ ॥

हे त्रिपुरे ! सौन्दर्य के विलासस्थान रूप; चौदह भुवनों के जो स्वामी हैं, उनके ऐश्वरियों के कलपवृक्ष रूप; और समस्त कविता रूपी पुष्पो के विकास के लिये पूर्ण चन्द्रमारूप जो जो प्रणाम हैं, हे जगत जननी वही तुमको प्राप्त हों ॥ २ ॥

देवि:! स्तुतिव्यतिकरे कृतबुद्धयस्ते ।
वाचस्पतिप्रभृतयोपि जडीभवन्ति ॥
तस्मान्निसर्गजडिमा कतमोहमत्र ।
स्तोत्रं तव त्रिपुरतापनपत्नि कर्तुम् ॥ ३ ॥

हे देवि ! तुम्हारी स्तुति करने के व्यापार में बुद्धि कौशल रखने वाले बृहस्पति आदि देव गुरु भी जडबुद्धि बनते हैं ॥ हे महादेव की पत्नी ! तिस कारण मैं स्वभाव से ही मूरख जडबुद्धि कौन हों कि तुम्हारे स्तुति करने को समर्थ बनों ॥ ३ ॥

मातास्तथपि भवतीं भवतीव्रताप ।
विच्छित्तये स्तुति महार्णवकर्णधारः ॥
स्तोतुं भवानि! स भवच्चरणारविन्द ।
भक्तिग्रहः किमपि मां मुखरीकरोति ॥ ४ ॥

हे भवानीमातः ! फिर भी संसाररूपी कठिन तापों के विनाश के लिऐ, स्तुतिरूपी अगाध समुद्र का मल्लाह बना हुआ, आप के चरणारविन्दों की जो अलौकिक भक्ति का आग्रह है, वही मुझे स्तुति करने में वाचालित बनाता है ॥ ४ ॥

सूते जगन्ति भवती भवती बिभर्ति ।
जागर्ति तत्क्षयकृते भवती भवानि! ॥
मोहं भिनत्ति भवती भवती रुणद्धि ।
लीलायितं जयति चित्रमिदं भवत्या ॥ ५ ॥

हे भवानि! ब्रह्मनरूप से तुम संसार की उत्पत्ति करती हो ॥ वैष्णवी रूपसे संसार का पालन करती हो ॥ रुद्राणी रूप से संसार का संहार करती हो ॥ तुम मोह(अज्ञान)को दूर करती हो ॥ तुमही संसार में फंसाती हो । जो तुम आश्चर्य जनक लीला को दिखाती हो उस का विजय नित्य होवें ॥ ५ ॥

यस्मिन्मनागपि नवाम्बुजपत्रगौरि! ।
गौरि! प्रसाद मधुरां दृशमादधासि ॥
तस्मिन्निरन्तरम नङ्गशरप्रकीर्णा ।
सीमन्तिनी नयन संततयः पतन्ति ॥ ६ ॥

हे गौरि! नवस्थल कमल के पत्र के समान श्वेतवर्णा! तुम जिस पुरुष विशेष पर थोडी सी अमृतस्यन्दिनी प्रसाद कीद्रष्टि डालती हो, उस पुरुष विशेष पर नित्य काम देव के बाणों से छिदे हुई देव स्त्रियों की आखों की पंक्तियां पडती हैं ॥ अर्थात् उस को योगिनियां वश हो जाती हैं ॥ ६ ॥

पृथ्वीभुजोऽप्युदयनप्रवरस्य तस्य ।
विद्याधर प्रणति चुम्बित पादपीठः ॥
यच्चक्रवर्तिपदवीप्रणयः स एष ।
त्वत्पाद पङ्कजरजः कणजः प्रसाद ॥ ७ ॥

राजा उदयन का पुत्र प्रवरसेन जिनके चरण कमलों को विद्याधर देव विशेष चूमते थे, जो चक्रवर्ती राज्य का प्रणयी (भर्ता) हुआ, हे जगदम्बा। वह आपके चरण कमलोंके धूलिकणों के प्रसाद से हुआ था अन्यथा नहीं ॥ ७ ॥

त्वत्पादपङ्कजरजः प्रणिपातपूतैः ।
पुण्यैरनल्पमतिभिः कृतिभिः कवीन्द्रैः ॥
क्षीरक्षपाकरदुकूलहिमावदाता ।
कैरप्यवापि भुवनत्रितयेऽपि कीर्ति ॥ ८ ॥

हे भगवति! तुम्हारे चरन कमलों की धूलि को प्रणाम करने से पवित्र बने हुए कई भाग्यशील पुण्यवान सूक्षम बुद्धि कवियोंने दूध चन्द्रमा और रेशमी वस्त्रके समान निर्मल कीर्ति तीन भुवनों में पाई ॥ ८ ॥

कल्पद्रुमप्रसवकल्पितचित्रपूजा- ।
मुद्दीपितप्रियतमा मदरक्तगीतिम् ॥
नित्यं भवानि! भवतीमुपवीणयन्ति ।
विद्याधराः कनकशैलगुहागृहेषु ॥ ६ ॥

हे भवानि! कल्पवृक्ष पुष्पों से किये हुए पूजा वाले ॥ प्रेम के गीत से गाते हुए ऐसे विद्याधर लोग, सुमेरुपर्वत के गुहा रूप घरों में बैठकर आनन्द से तुमारी गीत वीणा से गारहे हैं ॥ ८ ॥

लक्ष्मीवशीकरनकर्मणि कामिनीना- ।
मा कर्षणव्यतिकरेषु च सिद्धमन्त्रः ॥
नीरन्ध्रमोहतिमिर च्छिदुर प्रदीपो ।
देवि त्वदंघ्रिजनितो जयति प्रसादः ॥ १० ॥

हे देवि! तुम्हारे चरण कमलों से उत्पन्न हुवा जो उत्कृष्ट प्रसाद है, वह महा लक्ष्मी को वश करने के कार्य में, और कामना दायक शक्तियों के आकर्षण के कार्य में सिद्ध मंत्र है। तथा दृढ मोह रूपी अंधकार के काटने का दीपक है ॥ १० ॥

देवि! त्वदंघ्रिनखरत्नभुवो मयूखाः ।
प्रत्यग्रमौक्तिक रुचो मुदमुद्वहन्ति ॥
सेवा नति व्यतिकरे सुरसुन्दरीणां ।
सीमन्तसीम्नि कुसुमस्तवकायितं यैः ॥ ११ ॥

हे देवि तुम्हारे चरणों के नख रत्नों के नित्यनवीन जो किरण हैं ॥ वह मोतियों की सी दीप्ति धारन करते हैं ॥ उन किरणों के हेतु योगिनियों के सीमन्त की मर्यादा रूप पुष्पों के गुच्छे अर्थात उनके शिर तुम्हारी पूजा और प्रणाम के व्यवहार में समर्थ होते हैं ॥ १० ॥

मूर्ध्नि स्फुरत्तुहिन दीधिति दीप्तिदीप्तं ।
मध्येललाटमऽमरायुध रश्मिचित्रम् ॥
हृच्चक्र चुम्बि हुतभुक्कणिकानुरूपं ।
ज्योतिर्यदेतदिदमम्ब तव स्वरूपम ॥ १२ ॥

हे मातः तुम्हारा मस्तक चन्द्रमा की चांदनी सी देदीप्य मान है ॥ माथा तुम्हारा इन्द्रधनुष जैसे नाना वर्णों से रंजित है ॥ हृदय तो अग्नि की चिंगारियां जैसी ज्योतिवाला है ।. यही तेरा स्वरूप है ॥ १२ ॥

रूपं तव स्फुरितचंद्रमरीचिगौर- ।
मालोकते मनसि वागधिदैवतं यः ॥
निस्सीमसूक्तिरचनामृतनिर्झरस्य ।
तस्य प्रसादमधुराः प्रसरन्तिः वाचः ॥ १३ ॥

जो पुरुष तुम्हारे रूप को विकसित चन्द्रमा के किरणों के सदृश श्वेत वर्णी सरस्वती रूप मस्तक में ध्यावे, उस (पुरुष) के स्तुति रचना के निर्मल और मीठे वाक्य अमृत नदी के प्रवाह जैसे निकलते हैं ॥ १३ ॥

सिन्दूरपांसुपटलच्छुरितामिव द्यां ।
त्वत्तेजसा जतुरसस्नपितामिवोर्वीम् ॥
यः पश्यति क्षणमपि त्रिपुरे विहाय ।
व्रीडां मृडानि! सुदृशस्तमनुद्रवन्ति ॥ १४ ॥

हे त्रिपुरे! तुम्हारे तेज से मानो सिंदूर की धूली से आकाश आछादित हुआ, और पृथिवी भी लाक्षा रस से रंजित जैसी हुई है। जो पुरुष लाज छोड कर एक क्षण भी ऐसे तुम्हारे स्वरूप को देखे, हे मृडाणि! उस पुरुष के चक्षुरादि इन्द्रियों की शक्तियां वश होकर पीछे दोडती हैं ॥ अर्थात वह जितेन्दिय बन जाता है ॥ १४ ॥

मातर्मुहूर्तमपि यः स्मरति स्वरूपं ।
लाक्षारसप्रसरतन्तुनिभं भवत्याः ॥
ध्यायन्त्यनन्यमनसस्तमनङ्गतप्ताः ।
प्रद्युम्नसीम्नि सुभगत्वगुणं तरुण्यः ॥ १५ ॥

हे माताजी! जो पुरुष तुम्हारे स्वरूप का लाक्षा रस के बारीक तन्तु के समान महोर्त मात्र भी स्मरण करे ॥ उस सुन्दर गुण वाले पुरुष को काम देव से तपाई हुई देवस्त्रियां एकाग्र चित होकर भावना करती हैं ॥ तात्पर्य यह है कि उसकी चित वृत्तियां वशी भूत हो जाती हैं ॥ १५ ॥

योयं चकास्ति गगनार्णवरत्नमिन्दु– ।
योयं सुरासुरगुरुः पुरुषः पुराणः ॥
यद्वामम्ऽर्धमिदम्ऽन्धकसूनस्य । दें
देवि त्वमेव तदिति प्रतिपादयन्ति ॥ १६ ॥

जो आकाश रूपी समुद्र के रत्नभूत चन्द्रमा को प्रकाशित करती है ॥ जो देवता और असुरों का गुरु पुराण पुरुष आदि शक्ति है। जो महादेव जी की वामार्ध भाग है, हे देवि! वह तुम ही हो ॥ यः शास्त्रों में साधकजन सिद्ध करते हैं ॥ १६ ॥

इच्छानुरूपमनुरूपगुणप्रकर्षं ।
सङ्कर्षणि त्वमनुसृत्य यदा बिभर्षि ॥
जायेत स त्रिभुवनैकगुरुस्तदानीं ।
देवः शिवोपि भुवनत्रयसूत्रधारः ॥ १७ ॥

हे संकर्षणि! अपनी इच्छा के अनुकूल (स्वत्व रज तम) गुणों की आधिक्य को अनुसरण करके जब धारण करती हो उसी समय हे देविः वह तीन भुवनों के केवल एक गुरु भगवान शिवजी उत्पन्न होकर संसार नाटक के आरम्भ का सूत्र धार (प्रधान नट) बनता है ॥ १७ ॥

रुद्राणि विद्रुममयीं प्रतिमामिव त्वां ।
ये चिन्तयन्त्यरुणकान्तिमनन्यरूपाम् ॥
तानेत्य पद्मलदृशः प्रसभं भजन्ते ।
कण्ठावसक्तमृदुबाहुलतास्तरुण्यः ॥ १८ ॥

हे रुद्राणि! जो साधक तुम्हारी प्रवाल रत्न की प्रतिमा जैसी रक्त वर्ण, उपमा रहित मूर्ति का चिन्तन करते हैं ॥ उन साधकों को नितनवीन देवस्त्रियां गले में कोमल भुजालतायें डाल कर समीप होकर भजन करती हैं ॥ १८ ॥

त्वद्रूपमुल्लसित दाडिम पुष्परक्त- ।
मुद्भावयेन्मदन दैवतमक्षरं यः ॥
तं रूपहीनमपि मन्मथनिर्विशेष- ।
मालोकयन्त्यु रुनितम्बभरा स्तरुण्यः ॥ १६ ॥

जो भक्त जन विकसित अनार के पुष्प के समान लाल तुम्हारे अविनाशी स्वरूप कामराज वीज की भावना करें; उन भक्त जनों को रूप हीन होने परभी, सुन्दररूप युवतियां योगिनियां निःशंक प्रेम करती हैं ॥ १६ ॥

ध्यातासि हैमवति येन हिमांशुरश्मि- ।
मालाऽमलद्युतिऽरकल्मषमानसेन ॥
तस्याऽविलम्बमनवद्यमनन्तकलप- ।
मल्पैर्दिनैः सृजसि सुन्दरि वाग्विलासम् ॥२०॥

हे हिमालय की बेटी! जिस शुद्धमन वाले साधक ने चन्द्रदेव के किरणों के समान निर्मल चमक वाले तेरे स्वरूप का ध्यान किया है, हे सुन्दरि! उस के झटपट ही निर्दोष चिरकाल तक रहने वाले वाणी विलास को उत्पन्न करती है ॥ २० ॥

आधार मारुत निरोधवशेन येषां ।
सिन्दूररञ्जित सरोज गुणानुकारि ॥
तीव्रं हृदि स्फुरति देवि! वपुस्त्वदीयं ।
ध्यायन्ति तानिह समीहितसिद्धसाध्या ॥ २१ ॥

हे देवि! जिन पुरुषों को मूलाधार पवन के निरोध के बलसे तुम्हारा स्वरूप सिन्दूर से रंगे हुये कमल के समान हृदय में प्रकट भासता है उन पुरुषों का ध्यान सिद्ध और साध्य देवता पूर्ण अभिलाश से करते हैं ॥ २१ ॥

त्वामैन्दवीमिव कलामऽनुभालदेश- ।
मुद्भासिताम्बरतलामऽवलोकयन्तः
सद्यो भवानि! सुधियः कवयो भवन्ति
त्वां भावनाहितधियां कुलकामधेनुः ॥ २२ ॥

हे भवानि! जिन तत्वदर्शियों को तुम्हारे माथे पर शून्य स्थान में चन्द्रमा की जैसी कला देखते हुए समीप भास्ती है, वह कवि बन जाते हैं॥ और जिन की बुद्धियां तुम्हारी भावना में लगी हैं, उनके लिए तू अभीष्टफल को देने वाली हो ॥ २२ ॥

त्वां व्यापिनीति सुमना इति कुण्डलीति ।
त्वां कामिनीति कमलेति कलावतीति ॥
त्वां मालिनीति ललितेत्यऽपराजितेति ।
देवि! स्तुवन्ति विजयेति जयेत्युमेति ॥ २३ ॥

हे देवि! भक्त जन तुमको व्यापिनी (सर्व व्यापक) सुमना (शखा मूल स्थान) कामिनी (अभिष्ट दातृ) कलावती (सोमसूर्याग्निस्वरूपा) मालिनि (वर्ण माला रूपी) ललिता (सौन्दर्यस्थान रूपी) अपराजिता (शत्रुओं से अजित) विजया तथा जया (जयदेती वाली) उमा (शिव पत्नी) ऐसे नामों से पुकारते हैं ॥ २३ ॥

ये चिन्तयन्त्यरुण मण्डलमध्यवर्ति ।
रूपं तवाम्ब! नवयावकपंकपिंगम् ॥
तेषां सदैव कुसुमायुध बाणभिन्न- ।
वक्षःस्थला मृगदृशो वशगा भवन्ति ॥ २४ ॥

हे अम्ब! जो साधक बाल सूर्य के मण्डल में रहने वाले नव लाक्षा की कीचड केसमूह के समान तुम्हारे (भूरे) रूप को चिंतन करते हैं ॥ उन पुरुषों को नित्य कामदेव के बाणों से काटे हुए वक्षःस्थल वाली योगिनियां वश वरती हो जाती हैं ॥ २४ ॥

उत्तप्तहेमरुचिरे त्रिपुरे! पुनीहि ।
चेतश्चिरन्तनमघौघवनं लुनीहि ॥
कारागृहे निगडबन्धनपीडितस्य ।
त्वत्संस्मृतौ झटिति मे निगडास्त्रुटन्ति ॥२५॥

हे तपाये हुए सोने के समान दीप्तिमती त्रिपुरे! तुम्हारे चरणों के स्मरण करणे वाले मुझको पवित्र कीजियो ॥ मेरे चित में चिर काल के अर्जित पाप समूह के वन को नाश कीजियो ॥ संसार रूपी काराग्रह में काम क्रोध रूपी द्रढ वंधन की संकल को जिसमें मैं पीडित हों तत्क्षनात काट दी जियो ॥ २५ ॥

शर्वाणि! सर्वजनवन्दितपादपद्मे ।
पद्मच्छद च्छवि विडम्बित नेत्रलक्ष्मि ॥
निष्पापमूर्तिजनमानसराजहंसि! ।
हंसि त्वमापदमनेकविधां जनस्य ॥ २६ ॥

हे शर्वाणि! शिव के हृदय वल्लभे! हे सव जीव विशेष से वन्दित चरण कमल वाली! हे अपने नेत्रों की शोभा से तिरस्कृत कमल पत्रवाली! हे शुद्ध शरीर वाले पुरुषों के मानस (चित्त) रूपी जो सरोवर है उस में विहार करने वाली राजहन्सि! तुम साधक मनुष्य के नाना प्रकारकी आपदा को दूर करती हो ॥२६॥

त्वद्रूपैकनिरूपणप्रणयिताबन्धो दृशोस्त्वद्गुण-।
ग्रामाकर्णनरागिता श्रवणयोस्त्वत्संस्मृतिश्चेतसि ॥
त्वत्पादार्चनचातुरी करयुगे त्वत्कीर्तनं वाचि मे ।
कुत्रापि त्वदुपासनव्यसनिता मे देवि! मा शाम्यतु २७

हे देवि! तुम्हारे रूप के दर्शन का जो प्रणय है। वह मेरे नेत्रों को प्राप्त हो, तुम्हारे गुण समूह के सुनने में जो राग है, वह मेरे कानों को प्राप्त हो। तुम्हारी नाम स्मरण मेरे चित्त को प्राप्त हो तुम्हारे चरण कमलों के अर्चना की जो चतुरता है, वह मेरे हाथों को प्राप्त हो, तुम्हारी कीर्तना मेरी वाणी को प्राप्त हो। कहीं भी तुम्हारी उपासना की जो प्रीति है, वह मुझ में वढती रहे ॥ २७ ॥

उद्दामकोम परमार्थ सरोजषण्ड-।
चण्डद्युतिद्युतिमुपासितषट प्रकाराम् ॥
मोह द्विपेन्द्र कदनोद्यतबोधसिंह-।
लीलागुहां भगवतीं त्रिपुरां नमामि ॥ २८ ॥

सब से उत्कृष्ट जो अभिलषणीय वस्तु कामराज वीजाक्षर रूप परमार्थ, वही कमलों का पुंज है, उसके समान अतिदीप्तिमती, मूलाधारादिषट चक्रों में उपासित; अज्ञान रूपी हाथी के मारने में बोध रूप सिंहकी, लीला रूपी गुफा मैं स्थित, त्रिपुरा भगवतीको प्रणाम करता हों ॥२८॥

गणेशवटुकस्तुता रतिसहायकामान्विता ।
स्मरारिवरविष्टरा कुसुमबाणबाणैर्युता ॥
अनंगकुसुमादिभिः परिवृता च सिद्धैस्त्रिभिः ।
कदम्बवनमध्यगा त्रिपुरसुन्दरी पातु नः ॥ २९ ॥

गणेश, विष्णु ब्रह्मा से स्तुति किई हुई; रति प्रीति के सहाय काम देव से युक्त; शिव ही आधार वाली; काम देव के बानों युक्त; दिव्यौघ सिद्धौघ मानवौघ तीन कारणों से परिवृत; कदम्ब वृक्ष के वन में स्थित त्रिपुर सुन्दरी हमारी रक्षा करे ॥ २९ ॥

ब्रह्मेन्द्र रुद्र हरिचन्द्र सहस्ररश्मि- ।
स्कन्द द्विपानन हुताशन वन्दितायै ।
वागीश्वरि ! त्रिभुवनेश्वरि . विश्वमात-
रन्तर्बहिश्च कृतसंस्थितये नमस्ते ॥ ३० ॥

हे सरस्वति ! हे त्रिभुवनेश्वरि ! हे जगतमात ! ब्रह्मा, इन्द्र, रुद्र, विष्णु, चन्द्रमा, सूर्य, कुमार, गणेश, अग्नि से वन्दना किई जाती हो । तुम ही अन्तर बाहिर रमने वाली को नमस्कार होवे ॥ ३० ॥

यः स्तोत्रमेतदऽनुवासरमीश्वरायाः ।
श्रेयस्करं पठति वा यदि वा शृणोति ॥
तस्येप्सितं फलति राजभिरीड्यतेऽसौ ।
जायेत स प्रियतमो हरिणेक्षणानाम् ॥ ३१ ॥

जो साधक कल्याण कारिणी भगवती की इस स्तुति को प्रति दिन पढता है, या सुनता है । उस की मनोकामना भगवती पूर्ण करती है। वह चक्र वर्तियों से पूजा किया जाता है । और योगिनियों का भी स्नेहपात्र वह होता है ॥ ३१ ॥

घटस्तवस्तृतीयः

देवि त्र्यम्बकपत्नि पार्वति सति त्रैलोक्यमातः शिवे ।
शर्वाणि त्रिपुरे मृडानि वरदे रुद्राणि कात्यायनि ॥
भीमे भैरवि चण्डि शर्वरि कले कालक्षये शूलिनि ।
त्वत्पादप्रणतान नन्यमनसः पर्याकुलान्पाहि नः ॥ १ ॥

हे देवि! चमकती हुई मूर्ति वाली । हे त्रिनेत्र धारी शिव के प्राणवल्लभे! हे हिमालय की पुत्रि! हे दक्ष की पुत्रि! हे तीन लोगों की मातः! हे कल्याण कारिणि! हे शिवप्रिये! त्रिपुरे! बीजत्रय रूप वाली! हे सुख देने वाली! वरदेने वाली! रुद्र की शक्ति रूपे! हे कात्यायन मुनि की बेटी! हे शत्रुपक्ष को भय देने वाली! हे भयानक शब्द वाली! हे भयानक तेज वाली! हे रात्रि स्वरूपे! हे वीर्य वति! हे कालभय दूर करने वाली! हे त्रिशूल को धारण करने वाली! तुम्हारे चरणों पर पडे हुए एकाग्र मन वाले तथा अत्यन्त व्याकुल बने हुए हमको पालन करो ॥ १ ॥

उन्मत्ता इव सग्रहा इव विषव्यासक्तमूर्च्छा इव ।
प्राप्तप्रौढमदा इवातिविरहग्रस्ता इवार्ता इव ॥
ये ध्यायन्ति हि शैलराजतनयां धन्यास्त एकाग्रत- ।
स्त्यक्तोपाधिविवृद्धरागमनसो ध्यायन्ति वामभ्रुवः ॥ २ ॥

उन्मत्तचित जैसे, सूर्य आदिग्रह वा किसी हठ में फंसे हुवे जैसे विष की प्राप्ति से मूर्छित जैसे बडे घुमराडी जैसे, बहुत विरह में पीडित जैसे, दीनता से पूर्ण जैसे जो (भाग्यशील साधक) पर्वत पुत्री के ध्यान में एकाग्र चित हैं, उनको इन्द्रिय वृत्तियां, उपाधियां छोड कर राग पूर्ण मन से चिन्तन करती हैं ॥ २ ॥

देवि! त्वां सकृदेव यः प्रणमति चोणीभृतस्तं नम- ।
न्त्या जन्म स्फुरदंघ्रिपीठविलुठत्कोटीरकोटिच्छटाः ॥
यस्त्वामर्चति सोऽर्च्यते सुरगणै र्यः स्तौति स स्तूयते ।
यस्त्वां ध्यायति तं स्मरार्तिविधुरा ध्यायन्ति वामभ्रुव ३

हे देवि! जो पुरुष तुमको एक वार प्रणाम करता है, उस के चरणों पर राजा लोग अपने ताजरत्नों को रखकर जन्मांतर तक अधीन रहते हैं। जो पुरुष तुम्हारी पूजा करते हैं वह देव गणों से पूजा किये जाते हैं जो तुम्हारी स्तुति करता है, वह देवताओं से स्तुति किया जाता है। जो पुरुष तुम्हारा ध्यान करता है, उस को कुटिल नेत्र वाली योगिनियां ध्यान करती हैं ॥ ३ ॥

ध्यायन्ति ये क्षणमपि त्रिपुरे! हृदि त्वां ।
लावण्य यौवनधनैरपि विप्रयुक्ताः ॥
ते विस्फुरन्ति ललितायत लोचनानां ।
चित्तैक भित्ति लिखित प्रतिमाः पुमांसः ॥ ४ ॥

हे मातः त्रिपुरे ! सौन्दर्य तारुण्य और धन से भी हीन जो साधक पुरुष एक क्षण में तुम्हारे स्वरूप को हृदय में चिन्तन करते हैं। वह पुरुष सुन्दर और लंबे नेत्रों वाली अष्ट सिद्धियों का चित्त रूपी दीवार पर चित्रित पुरुष जैसे विकास में आते हैं ॥ ५ ॥

एतं किं नु दृशा पिबाम्युत विशाम्यस्याङ्गमङ्गैर्निजैः ।
कि वाऽमुं निगलाम्यनेन सहसा किं वैकतामाश्रये ॥
तस्येत्थं विवशो विकल्पघटनाकूतेन योषिज्जनः ।
किं तद्यन्न करोति देवि! हृदये यस्य त्वमावर्तसे ॥ ५ ॥

इस साधक को मैं नेत्रों से क्यों न पानकरूं, या अपने अंगों से इस के शरीर में प्रवेश क्यों न करूं, या पेट में क्यों न समाऊं! तथा क्यों न मैं इस के साथ एकता (अभेद) पाऊं। ऊपर लिखे विचार घटना के अभिप्राय से उस की इन्द्रिय शक्तियां अधीन होती हैं। हे देवि! तुम जिस के अन्तः करण में रमन करती हो, संसार में उसको कौनसा वस्तु दुर्लभ है, अर्थात कोई नहीं ॥ ५ ॥

विश्वव्यापिनि! यद्वदीश्वर इति स्थाणावनन्याश्रयः ।
शब्दः शक्तिरिति त्रिलोकजननि! त्वय्येव तथ्यस्थितिः ॥
इत्थं सत्यपि शक्नुवन्ति यदिमाः क्षुद्रा रुजो बाधितुं ।
त्वद्भक्तानपि न क्षिणोषि च रुषा तद्देवि चित्रं महत् ॥६॥

हे जगत में व्याप्त रहने वाली! जिस प्रकार इश्वर शब्द इश्वर में चरितार्थ(स्वाभाविक)होता है, अन्य किसी पर नही, हे त्रिजगत्मातः! उसी प्रकार शक्ति शब्द तुम्हारे में ही शोभा देता है, अन्य पर नही। यद्यपि ईश्वर भक्तों को भववाधा दुः खितकर सकती है, हे देवि! क्रोध से भी तुम अपने भक्तों को क्षुब्ध नहीं बनाती हो, यह तो अचरज की बात है॥ ६॥

इन्दोर्मध्यगतां मृगाङ्कसदृशच्छायां मनोहारिणीं ।
पाण्डूत्फुल्लसरोरुहासनगतां स्निग्धप्रदीपच्छविम् ॥
वर्षन्तीममृतं भवानि! भवतीं ध्यायन्ति ये देहिन- ।
स्ते निर्मुक्तरुजो भवन्ति विपदः प्रोज्झन्ति तान्दूरत ॥७॥

हे भवानि! चन्द्रमा के मध्य, चन्द्रका रूप से स्थित, चन्द्रमा के समान, प्रकाश वाली तथा अत्यन्त मनोहर, विकसित स्थल कमल पर स्थित तैलपूर्ण दीप की भांति उज्वल, अमृत की वरसाती हुई, ऐसे तुम्हारे रूपका जो साधक ध्यान करते हैं। वे नीरोग होते हैं। और विपदायें उनको छोड देती हैं, अर्थात किसी प्रकार का रोग तथा विपदा उनको आक्रमण नही कर सकती॥ ७॥

पूर्णेन्दोः शकलैरिवातिबहलैः पीयूषपूरैरिव।
क्षीराब्धेः लहरीभरैरिव सुधापङ्कस्य पिण्डैरिव॥
प्रालेयैरिव निर्मितं तव वपुर्ध्यायन्ति ये श्रद्धया।
चित्तान्त र्निहतार्तिताप विपदस्ते सम्पदं बिभ्रति॥ ८॥

पूर्ण चन्द्रमाके टुकडे जैसी अमृत के प्रवाह सी, क्षीर समुद्र के लहरों सी, अमृत के कीचड के पिण्ड सी, बर्फ जैसे बने हुए तुम्हारे स्वरूप का ध्यान जो मनुष्य करते हैं, वह हृदय स्थित आंतरा संताप और विपदा को त्याग करके लक्ष्मी के पात्र बनजाते हैं॥ ८॥

ये संस्मरन्ति तरलां सहसोल्लसन्तीं।
त्वां ग्रन्थिपञ्चकभिदं तरुणार्कशोणाम्॥
रागार्णवे बहलरागिणि मज्जयन्तीं।
कृत्स्नं जगद्दधति चेतसि तान्मृगाक्ष्यः॥ ९॥

जो साधक बिजली के समान चंचल, निरावरण चमकने वाली षट्दल, दशदल, द्वादशदल, षोडश दल, द्विदल अथवा स्वादिष्टानादि पंच ग्रन्थियों के नाम वाली, बाल सूर्य जैसी रक्त वर्ण वाली, अति अनुराग वाली, अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश रूप द्वैत प्रपंच के समद्र में सब जगत को डुबाने वाली, तुम को स्मरण करते हैं उन को योगिणियां चित में धारण करती हैं॥ ९॥

लाक्षारस स्नपितपंकज तंतुतन्वी-
मन्तः स्मरत्यनुदिनं भवती भवानि! ॥
यस्तं स्मर प्रतिमम प्रतिमस्वरूपा ।
नेत्रोत्पलैर्मृगदृशो भृशमर्चयन्ति ॥ १० ॥

हे भवानि! लाक्षारस से रंगे हुए कमल फूल की तार जैसे (रक्त वर्ण) तुम्हारे कोमल स्वरूप का जो साधक प्रति दिन अन्तः करण में चन्तन करता है, उसको काम देव के समान अलौकिक स्वरूप वाली योगिणियां नेत्र कमलों से अर्चन करती हैं ॥ १० ॥

स्तुमस्त्वां वाचमव्यक्तां हिमकुन्देन्दुरोचिषम् ।
कदम्बमालां बिभ्राणामापादतललम्बिनीम् ॥ ११ ॥

हिम (वर्फ) कुन्द (श्वेतपुष्प) इन्दु (चन्द्रमा) की भांति चमकती हुई गले में चरणों तक लटकती हुई कदम्ब फूलों की माला को धारण करती हुई सूक्ष्म वाग्दवी की हम स्तुति करते हैं ॥ ११ ॥

मूर्धीन्दोः सितपङ्कजासनगतां प्रालेयपाण्डुत्विषं
वर्षन्तीममृतं सरोरुहभुवो वक्त्रेऽपि रंध्रेऽपि च ॥
अच्छिन्ना च मनोहरा च ललिता चातिप्रसन्नापिच ।
त्वामेव स्मरतां स्मरारिदयिते वाक्सर्वतो वल्गति ॥१२॥

हे काम देव के शत्रु शिव की प्रिये! हे अमृत कला रूप नाद-स्थान में श्वेत कमल पर स्थिति करने वाली! बर्फ के समान श्वेत दीप्ति वाली! हे मुख और ब्रह्मरन्ध्र के कमलस्थान को अमृत की वर्षा करने वाली! निरमल मनोहर, सुन्दर और प्रसाद गुणों वाली सरस्वती तुम ही को जो स्मरण करते हैं उन की वाणी दुर्गम वस्तु को भी सुगम कर देती है ॥ १२ ॥

ददातीष्टान्भोगान् क्षपयति रिपून् हन्ति विपदो ।
दहत्याधीन्व्याधीञ् शमयनि सुखाति प्रतनुने ॥
हठादन्तर्दुःखं दलयति पिनष्टीष्टविरहं ।
सकृद् ध्याता देवी किमिव निरवद्यं न कुरुते ॥ १३ ॥

एक वार देवी के स्मरण करने वाले साधक को कोनसा दुर्लव वस्तु सुलव नहीं होता है, देवी उसको वाञ्छित भोग देती है । शत्रों को दूर करती है । विपदाओं को नाश करती है । मन की पीडाओं को जला दती है ॥ शरीर के सन्तापों को शान्त करती है । सुख को बडाती है । हृदयान्तर्गत दुःखों को नाश करती है । प्रियतमों के विरह को दूर करती है ॥ १३ ॥

यस्त्वां ध्यायति वेत्ति विन्दति जपत्यालोकते चिन्तय- ।
त्यन्वेति प्रतिपद्यते कलयति स्तौत्याश्रयत्यर्चति
यश्च त्र्यम्बकवल्लभे तव गुणानाकर्णयत्यादरात्
तस्य श्रीर्न गृहादपैति विजयस्तस्याग्रतो धावति १४

जो साधक तेरी स्मरण करता है, बुद्धि से जानता है, विद्या से खोजता है, शुद्ध मन से जपता है, ज्ञान नेत्रों से देखता है, श्रवन मनन से विचारता है, कर्मइन्द्रियों से पीछे दौड़ता है, ज्ञान इन्द्रियों से प्राप्त करता है, स्वरूप लाभ की चिन्तन करता है स्तोत्रों से स्तुति करता है, विधि से अर्चना करता है हे महादेव की प्यारी! जो साधक तुम्हारे त्रिगुणात्मक कर्मों को आदर से सुनता है, उस साधक के घरसे लक्ष्मी कभी नहीं भागती, और विजय आगे २ दौड़ता है ॥ १४ ॥

किं किं दुःखं दनुजदलिनि क्षीयते न स्मृतायां ।
का का कीर्तिः कुलकमलिनि! ख्याप्यते न स्तुतायाम् ॥
का का सिद्धिः सुरवरनुते प्राप्यते नार्चितायां ।
कं कं योगं त्वयि न चिनुते चित्तमालम्बितायाम् ॥ १५ ॥

हे असुर कुल को नाश करने वाली! तुम्हारी स्मरण करने वालों को कौन कौन दुःख क्षीण नहीं होता ॥ हे कुल बढ़ाने वाली देवी! तुम्हारे स्तुति करने वालों को कौन कौन सी कीर्ति सिद्ध नहीं होती ॥ हे ब्रह्मादि देवताओं की पूज्य भगवती! तुम्हारी पूजा करने

वालों को कौन कौन सी सिद्धि प्राप्त नहीं होती ॥ तुम्हारी चिंतन में चित लगाने वालों को कौन कौन सा योगप्राप्त नहीं होता ॥ १५ ॥

ये देवि ! दुर्धरकृतान्तमुखान्तरस्था ।
ये कालि ! कालघनपाशनितान्तबद्धाः ॥
ये चण्डि ! चण्डगुरु कल्मष सिन्धुमग्ना-
स्तान्पासि मोचयसि तारयसि स्मृतैव ॥ १६ ॥

हे देवि! जो साधक तेरी स्मरण करता है, उस को तुम कठिन महा काल के मुख में पडने से बचाती हो । हे कालि! यम पाशों के दृढ बन्धनों से छुडाती हो । हे चण्डि! पापरूपी समुद्र में डूबते को बचाकर पार करती हो ॥ १६ ॥

लक्ष्मीवशीकरणचूर्णसहोदराणि ।
त्वत्पादपंकजरजांसि चिरं जयन्ति ॥
यानि प्रणामभिलितानि नृणां ललाटे ।
लुम्पन्ति दैवलिखितानि दुरक्षराणि ॥ १७ ॥

हे मातः तुम्हारे चरण कमलों की धूलि के चूर्ण(कणियां)जो महा लक्ष्मी के वश(अधीन)करने के सहायक हैं, उनका धीर्घ काल पर्यन्त विजय हो । यह धूली के कण प्रणाम करने के समय जिस (पुरुष) के माथे पर लगें उस से विधाता के लिखे हुए अनिष्टसूचक अक्षर मिट जाते हैं ॥ १७ ॥

रे मूढाः ! किमयं वृथैव तपसा देहः परिक्लिश्यते ।
यज्ञैर्वा बहुदक्षिणैः किमितरे रिक्तीक्रियंते गृहाः ॥
भक्तिश्चेदविनाशिनी भगवतीपादद्वयी सेव्यता—
मुन्निद्राम्बुरुहातपत्र सुभगा लक्ष्मीः पुरो धावति ॥१८॥

हे मूढो ! तपस्या, चान्द्रायनदि से इस शरीर को क्यों निष्फल कष्ट में डालते हो । अथवा बहुत दक्षना वाले यज्ञों से कई लोग अपने घर को खाली करते हैं । यदि अनादि अनन्त(नाश रहित) भगवती के पाद युगल (जोडी) के सेवा भक्ति से करो तु सेवा करने वाले को महा लक्ष्मी, जिस के सिर पर (विकसित) खिले हुए कमल का छत्र शोभित है, आगे २ दौडती है ॥ १८ ॥

याचे न कंचन न कंचन वंचयामि ।
सेवे न कंचन निरस्तसमस्तदैन्यः ॥
श्लक्ष्णं वसे मधुरमद्मि भजे वरस्त्रीं ।
देवी हृदि स्फुरति मे कुलकामधेनुः ॥ १९ ॥

किसी से प्रार्थना नहीं करों । किसी को नहीं ठगों । समस्त दीन भाव को दूर करके किसी की सेवा नहीं करों । कोमल वस्त्र पहन लों । वा; मनोहर वास करों । मीठा खाओं । कुलीन स्त्री चित्शक्ति को भोगों । जब कामनाओं को देने वाली देवी मेरे हृदय में उदय करती है ॥ १९ ॥

शब्दब्रह्ममयि! स्वच्छे! देवि! त्रिपुरसुन्दरि! ।
यथाशक्ति जपं पूजां गृहाण परमेश्वरि! ॥ २० ॥

हे अनाहत शब्द स्वरूपे! त्रिमलों से हीन स्वरूप वाली! देवि! हे त्रिपुर सुन्दरि! मैं ने यथा शक्ति तुम्हारी जपपूजादि की हैं। इस लिए हे परमेश्वरि! तुम इस को स्वीकार करो ॥ २० ॥

नन्दन्तु साधकाः सर्वे विनश्यन्तु विदूषकाः ।
अवस्था शाम्बवी मेऽस्तु प्रसन्नोऽस्तु गुरुः सदा ॥२१॥

सब साधक पुरुष सुखी रहें। सब दूषणा करने वाले नाश को जावें। शिवस्वरूपिणी अवस्था मुझे प्राप्त हो। गुरुदेव सदा प्रसन्न रहे यह दास की प्रार्थना है ॥ २१ ॥

दर्शनात्पापशमनी जपान्मृत्युविनाशिनी ।
पूजिता दुःखदौर्भाग्यहरा त्रिपुरसुन्दरी ॥ २२ ।

त्रिपुर सुन्दरी भगवती के दर्शन से पापों का नाश होता है। जप करने से अकाल मृत्यु का नाश होता है। पूजन करने से कष्ट और दुर्भाग्यों का नाश होता है ॥ २२ ॥

नमामि यामिनीनाथलेखालंकृतकुन्तलाम्
भवानीं भवसन्तापनिर्वापणसुधानदीम् २३

चन्द्र कला से केश बन्ध को जिसने अलकृत किया और संसार के संताप को दूर करने के लिए जो नदी रूप है ऐसी भवानी को में नमस्कार करता हों ॥ २३ ॥

मंत्रहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च यद्गतम् ।
त्वया तत्क्षम्यतां देवि कृपया परमेश्वरि ॥ २४ ॥

हे देवि मनन के विना, कर्म के विना, वेदोक्त विधि के विना, जो कुछ मैं ने अनुचित किया, हे परमेश्वरि इस पर दया करके वह सब क्षमा करना चाहिए ॥ २४ ॥

इति श्री पञ्चस्तव्यां घटस्तवस्तृतीयः समाप्तः ।

—— §△§ ——

अम्बास्तवश्चतुर्थः ।

ॐ यामामनन्ति मुनयः प्रकृतिं पुराणीं ।
विद्येति यां श्रुति रहस्य विदो वदन्ति ॥
तामऽर्धपल्लवित शङ्कर रूप मुद्रां ।
देवीमनन्य शरणः शरणं प्रपद्ये ॥ १ ॥

जिस (माया शक्ति) को मुनि लोग मूल प्रकृति कहते हैं, वेदरहस्य को जानने वाले जिस को विद्या कहते हैं। उसही देवी शिव की प्रत्यय कारिणी (विश्वासजमाने वाली) अर्धांगी को मैं एकाग्र चित होकर शरण होता हों ॥ १ ॥

अ:बस्तवेषु तव तावदकर्तृकाणि ।
कुण्ठीभवन्ति वचसामपि गुम्फनानि ॥
डिम्भस्य मे स्तुतिरऽसावऽसमञ्जसापि ।
वात्सल्य निघ्नहृदयां भवतीं धिनोति ॥ २ ॥

हे मातः! तुम्हारी स्तुति करने में, ब्रह्मादि देवता, रचना में चतुर हो कर भी, असमर्थ हैं। मुझ मूर्ख बालक की स्तुति यदि अनुचित है तोभी अतिशय प्रेम के अधीन तुम्हारे हृदय को तृप्त करती है ॥ २ ॥

व्योमेति बिन्दुरिति नाद इतीन्दुलेखा-
रूपेति वाग्भवतनूरिति मातृकेति ॥
निःष्यन्दमान सुखबोध सुधा स्वरूपा ।
विद्योतसे मनसि भाग्यवतां जनानाम् ॥ ३ ॥

चिदाकाश रूप से। चिद्विमर्ष रूप से। चित्प्रकाश रूप से अमाकला रूप से। परा पश्यन्ति मध्यमा वैखरी वाग्भूमि रूप से। अकारादि क्षकारपर्यन्त शब्द राशि रूप से निकसती हुई शुद्ध बोध की अमृत प्रवाह रूप तुम भाग्य शील पुरुषों के मन में चमकती हो ॥ ३ ॥

आविर्भवत्पुलक सन्ततिभिः शरीरै-
र्निष्यन्दमान सलिलै र्नयनैश्च नित्यम् ॥
वाग्भिश्च गद्गदपदाभि रुपासते ये ।
पादौ तवाम्ब भुवनेषु त एव धन्याः ॥ ४ ॥

हे मातः! रोमाञ्च पंक्ति पूर्ण शरीरों से, धारासार आंसों निकसते हुए नेत्रों से। गद्गद पदों वाली वाणी से। जो साधक तेरे चरणों की उपासना करते हैं। वही तीनों भुवनों में धन्यवाद के योग्य है ॥ ४ ॥

वक्त्रं यदुद्यतमऽभिष्टतये भवत्या ।
स्तुभ्यं नमो यदऽपि देवि शिरःकरोति ।
चेतश्च यत्त्वयि परायणमऽम्ब तानि ।
कस्यापि केरपि भवन्ति तपोविशेषैः ॥ ५ ॥

हे अम्ब ! तुम्हारी स्तुति करने में जिन साधकों का मुख उद्यत है, हे देवि! जिन का सिर तेरे प्रणाम के लिए उद्यत है, और जिनका मन तुझ पर निरन्तर आसक्त है, उन में विरले किसी साधक को कहीं तप की विशेषता से हो जाता है ॥ ५ ॥

मूलालवाल कुहरादुदिता भवानि ।
निर्भिद्य षट्सरसिजानि तडिल्लतेव ॥
भूयोऽपि तत्र विशसि ध्रुवमंडलेन्दु—
निःष्यन्दमान परमामृत तोय रूपा ॥ ६ ॥

हे शिवप्रियतमे ! मूलाधार रन्ध्र से उठकर बिजली की भांति चमकती हुई, मूलाधार- स्वाधिष्ठान- मणिपूरक- अनाहत- विशुद्ध- आज्ञाचक्र नाम के षटकमलें को भेधनकरके ब्रह्मरन्ध्रस्थान में से अमृत कला रूप बहती हुई आनन्द जल रूप फिर वहीं ही प्रवेश करती हो । अर्थात मूलाधार से आज्ञा चक्र तक आरूह करके फिर अज्ञा चक्र से मूलाधार तक अवरूह कर करती हो ॥ ६ ॥

दग्धं यदा मदनमेकमनेकधा ते ।
मुग्धः कटाक्ष विधिरङ्कुरयां चकार ॥
धत्ते तदाप्रभृति देवि ललाटनेत्रं ।
सत्यं ह्रियेव मुकुलीकृतमिन्दु मौलिः ॥ ७ ॥

हे देवि! जब महादेव जी ने एक कामदेव को जला दिया, तो तुम ने अनायास ही कटाक्ष क्रम से उस कामदेव को अनेक रूप उत्पन्न किया ॥ तब ही से महादेव जी ने ललाट नेत्र को लज्जा से सच मुच संकुचित किया है ॥ ७ ॥

अज्ञात संभवमऽनाकलितान्ववायं ।
भिक्षुं कपालिनमऽवाससमऽद्वतीयम् ॥
पूर्वं करग्रहण मङ्गलतो भवत्याः ।
शम्भुं क एव बुबुधे गिरिराज कन्ये! ॥ ८ ॥

हे पार्वति! स्वयम्भू होने से अविदित जन्म वाले। कुल परंपरा रहित भिक्षुक, कपाल धारी, दिगम्बर, असाहाय ऐसे महादेव जी को तुम्हारे पाणिग्रहण से पहले कौन जानता था अर्थात जबसे तुमने उस के साथ विवाह किया तबसे जगत की उत्पती हुई ॥ ८ ॥

चर्माम्बरं च शवभस्मविलेपनं च ।
भिक्षाटनं च नटनं च परेतभूमौ ॥
वेताल संहति परिग्रहता च शम्भोः ।
शोभां बिभर्ति गिरिजे तव साहचर्यात् ॥ ९ ॥

हे गिरिजे ! गजचर्म धारण करने वाले, मृतशरी के भस्म का लेप करने वाले, भिक्षा के लिए फिरने वाले, श्मशान भूमि में नाच करने वाले, वेताल (भूत प्रेत पिशाचों के समूह) के परिवार वाले शम्भु, तुम्हारे साहचर्य से शोभा को धारण करता है ॥ ९ ॥

कल्पोप संहरण केलिषु पण्डितानि ।
चण्डानि खण्डपरशोरऽपि ताण्डवानि ॥
आलोकनेन तव कोमलितानि मात-
र्लास्यात्मना परिणमन्ति जगद्विभूत्यै ॥ १० ॥

श्रीमान महादेव के कठिन नाच जो कल्पों के संहार की क्रीडा में निपुण हैं, तुम्हारी नाच रूपी कोमल दृष्टिमात्र से जगत की विभूति के लिए परिणत हैं। अर्थात जगत रूपी ऐश्वर्य को बढाती हैं ॥ १० ॥

जन्तोरपश्चिमतनोः सति कर्मसाम्ये ।
निश्शेषपाश पटलच्छिदुरा निमेषात् ॥
कल्याणि! दैशिक कटाक्ष समाश्रयेण ।
कारुण्यतो भवसि शाम्भववेद्दीक्षा ॥ ११ ॥

हे कल्याणि! पुनर्जन्म के रहित जीव को शुभाशुभ कर्मों के साम्य होने पर भी सब पापों को क्षण में दूर करने वाली, गुरु वरों के कृपा कटाक्ष से तुम तांत्रिक विधि को या शिवशक्ति समावेश को दयासे जितलाने वाली होती हो ॥ ११ ॥

मुक्ताविभूषणवती नवविद्रुमाभा ।
यच्चेतसि स्फुरसि तारकितेव सन्ध्या ॥
एकः स एव भुवनत्रयसुन्दरीणां ।
कन्दर्पतां व्रजति पञ्चशरीं विनापि ॥ १२ ॥

मोतियों के भूषणों से अलंकृत, नवलोध्र से शोभाय मान, और (नक्षत्र) तारकों वाली संध्या जैसा तुम्हारा स्वरूप, जिस के चित में विलसित होता है। वही एक पुरुष तीन भवनों की (सुदरियों) इन्द्रिय शक्तियों के पंच बाणों के रहित भी काम बीज भाव को जाता है ॥ १२ ॥

ये भावयन्त्यमृत वाहि भिरंऽशुजालै-
राऽप्यायमान भुवनामऽमृतेश्वरीं त्वाम् ॥
ते लङ्घयन्ति ननु मातरऽलङ्घनीयां ।
ब्रह्मादिभिः सुरवैरपि कालकद्याम् ॥ १३ ॥

हे मातः! जो पुरुष अमृत पूर्ण किरणों से तीन भुवनों को तृप्त करने वाली अमृतेश्वरी को भावना करते हैं। वह पुरुष काल मर्यादा से निश्चय करके पार चले जाते हैं। जिस काल मर्यादा का पार जाना ब्रह्मादि श्रेष्ट देवताओं को भी कठिन है ॥ १३ ॥

यः स्फाटिकाक्ष गुण पुस्तक कुण्डिकाढ्यां ।
व्याख्या समुद्यतकरां शरदिन्दु शुभ्राम् ॥
पद्मासनां च हृदये भवतीमुपास्ते ।
मातः स विश्वक वितार्किक चक्रवर्ती ॥ १४ ॥

हे मातः! जो पुरुष स्फाटिक मालाधारी, कुण्डल भूषण युक्त, हाथ फैलाकर व्याख्यान करती हुई, शरत्काल (असूकार्तिक) के चन्द्रमा के समान श्वेत कमल पर विराज मान तुम्हारे रूप की हृदय में उपासना करता है, वह जगत के तर्क वितर्क युक्त विद्वानों का राजा बनता है ॥ १४ ॥

बर्हावतंस युतबर्वर केशपाशां
गुञ्जावलीकृत घनस्तनहार शोभाम्
श्यामां प्रवालवदन सुकुमारहस्तां ।
त्वामेव नौमि शवरीं शवरस्य जायाम ॥ १५ ॥

मोर पुछ युक्त मनोहर केश वन्ध वाली, गुञ्जा रत्तियां फलों के हारों से अनोंकी शोभा वाली श्याम रूप कुछ लाल मुख वाली कोमल हस्तों वाली, जो शिकारिनी शिकारी रूप शिव की पत्नी है, उसको में नमस्कार करता हों ॥ १५ ॥

अर्धेन किं नवलताललितेन मुग्धे ।
क्रीतं विभोः परुषमऽर्धमिदं त्वयेति ॥
आलीजनस्य परिहासवचांसि मन्ये ।
मन्दस्मितेन तव देवि जडीभवन्ति ॥ १६ ॥

हे महा सुन्दरी! तुम ने नई वेल जैसी मनोहर स्वरूप वाली ने अपने अर्धांग के वदले स्वामी शिव के इस कठोर दक्षिण अर्धांग को मूल्य क्यों लिया; हे देवि! हम जानते हैं। कि सखी जनों के हास्य पूर्वक वचन तुम्हारे मन्द मुस्कान से मूढ वन जाते हैं ॥१६॥

ब्रह्माण्ड बुद्बुद कदम्बक संकुलोयं ।
मायोदधि र्विविधदुःख तरङ्गमालः ॥
आश्चर्यमम्ब झटिति प्रलयं प्रयाति ।
त्वद्ध्यान संतति महावडवामुखाग्नौ ॥ १७ ॥

हे अम्ब! यः मायां रूप समुद्र, ब्रह्माण्ड रूप जल के बुल बुलों के समूह से व्याप्त है विविध प्रकार के दुःख रूपी तरंग मालाओं से पूर्ण है। हे अम्ब! आश्चर्य है कि तुम्हारे ध्यान समूह रूप वडवाग्नि में यह माया रूप समुद्र तरंग और बुद्बुदों सहित शीघ्रही नाश हो जाता है ॥ १७ ॥

दाक्षायणीति कुटिलेति गुहारणीति ।
कात्यायनीति कमलेति कलावतीति ॥
एका सती भगवती परमार्थतोऽपि ।
संदृश्यसे बहुविधा ननु नर्तकीव ॥ १८ ॥

दक्ष प्रजापत की पुत्री सती; मूलाधार वासिनी कुण्डलिनी; हृद्गुफा वासिनी अंतर्यामिनी(चित शक्तिः) कलिका रूपा; लक्ष्मी रूपा कलावती (षोडश कलारूपा) इस प्रकार परमार्थ से एक ही सती भगवती (तुम सर्वरूप)नर्तकी जैसी विविध रूपों को धारण करने वाली दिखाई देती हो ॥ १८ ॥

आनन्दलक्षणमऽनाहतनाम्नि देशे।
नादात्मना परिणतं तव रूपमीशे॥
प्रत्यङमुखेन मनसा परिचीयमानं।
शंसन्ति नेत्रसलिलैः पुलकैश्च धन्याः॥ १९॥

हे ईशे! वह पुरुष धन्य हैं जो अनाहतस्थान(हृदय)में तुम्हारे सुख स्वरूप को, नाद रूप में परिणात करके एवं गत मन से अभ्यास करते हुए रोमाञ्च युक्त नेत्रों से आंसू भरते हुए तुम्हारी कीर्ति करते हैं॥ १९॥

त्वं चन्द्रिका शशिनि तिग्मरुचौ रुचिस्त्वं।
त्वं चेतनासि पुरुषे पवने बलं त्वम्॥
त्वं स्वादुतासि सलिले शिखिनि त्वमूष्मा ।
निःसारमेतदखिलं त्वदृते यदि स्यात् २०

हे भगवति! तुम चंद्रमा में जगदाहलादिनी चांदनी हो, तुम सूर्य में दीप्ति हो। तुम पुरुष में चेतना(चित रूप)हो। तुम पवन में वल हो, तुम जल में स्वाद(द्रवता)हो तुम अग्नि में उष्म(गरमी)हो जो कुछ जगत में तुम से पृथक है वह तुच्छ है अर्थात तुम से (पृथक) भिन्न कुछ भी नहीं है॥ २०॥

ज्योतींषि यद्दिवि चरन्ति यदन्तरिक्षं ।
सूते पयांसि यदऽहिर्धरणीं च धत्ते ॥
यद्वाति वायुरऽनलो यदुदर्चिराऽस्ते ।
तत्सर्वमऽम्ब तव केवलमाऽज्ञयैव ॥ २१ ॥

हे मातः! प्रकाशमान चन्द्र सूर्य तारे जो आकाश में घूमते हैं, मेघ जो अन्तरिक्ष (आकाश) में पानी बरसाता है। शेषनाग जो पृथिवी को धारण करता है, वायु जो चलती है, आग जिस की ज्योति ऊपर को उठती है, वह सब तुम्हारी केवल आज्ञा से ही होता है ॥ २१ ॥

सङ्कोचमिच्छसि यदा गिरिजे तदानीं ।
वाक्तर्कयोस्त्वमसि भूमिरऽनामरूपा ॥
यद्वा विकासमुपयासि यदा तदानीं ।
त्वन्नामरूपगणनाः सुकुरीभवन्ति ॥ २२ ॥

हे गिरिजे! जिस काल में तुम संकोच वा जगत के उपशम को चाहती हो तिस काल मन और वाणी के तुम अगोचर बन जाती हो। वा समस्त जगत शून्य का स्थान बन जाता है। फिर जब तुम विकास वा उन्मेष दशा के सन्मुख होती हो तुम्हारे नामों और रूपों की गणना सहज होती हैं अथवा सब प्रकार से नानाता प्रकट हो जाती है ॥ २२ ॥

भोगाय देवि भवतीं कृतिनः प्रणम्य ।
भ्रूकिंकरी कृत सरोजगृहा सहस्राः ॥
चिन्तामणि प्रचय कल्पित केलिशैले ।
कल्पद्रुमोपवन एव चिरं रमन्ते ॥ २३ ॥

हे देवि जो सुकृत पुरुष भोगों की लालसा से तुमको प्रणाम करते हैं वह भौंके चढाने (भ्रूक्षेप) से सहस्र ऐश्वर्य पूर्ण ग्रहो को वश में लाते हैं और चन्तामणि रत्नों से वनाए हुए क्रीडा पर्वतो पर कल्प वृक्ष के बागीचों में चिरकाल तक विचारते हैं ॥२३॥

हन्तुं त्वमेव भवसि त्वदऽधीनमीश ।
संसारतापमऽखिलं दयया पशूनाम् ॥
वैकर्तनी किरणसंहतिरेव शक्ता ।
घर्मं निजं शमयितुं निजैव वृष्ट्या ॥ २४ ॥

हे ईशे! कर्म पाशों में फंसे हुए मनुष्य रूप पशुओं पर दया करके तुम्हारे अधीन जो त्रिविध ताप हैं उन का नाश करने के लिए तुम शक्ति मता हो जिस प्रकार सूर्य की किरण पंक्तियां अपनी ही वर्षण से अपनी घरमी को शांत करने के लिए सामर्थ्य वाली होती हैं २४

शक्तिः शरीरमधिदैवतमन्तरात्मा ।
ज्ञानं क्रिया करणमासनजालमिच्छा ॥
ऐश्वर्यमायतनमावरणानि च त्वं ।
किं तन्न यद्भवसि देवि शशाङ्कमौलेः ॥ २५ ॥

तुम शक्ति हो, शरीर हो, अधिदैव हिरण्य गर्भ रूप हो, जीवात्मा हो, ज्ञान शक्ति हो, क्रिया शक्ति हो इन्द्रिय शक्ति हो आसन शक्ति हो, इच्छा शक्ति हो, अष्टादश विध ऐश्वर्य शक्ति हो, ग्रहादिकों का स्थान हो, परिवार देवता हो हे देवी ! चन्द्रकला धारी महादेव की तुम क्या न हो अर्थात जो शिव का स्वरूप है वही तुम्हारा स्वरूप है २५

भूमौ निवृत्तिरुदिता पयसि प्रतिष्ठा ।
विद्यानले मरुति शान्तिरतीतशान्तिः ॥
व्योम्नीति याः किल कलाः कलयन्ति विश्वं ।
तासां विदूरतरमम्ब! पदं त्वदीयम ॥ २६ ॥

हे जगतमाता ! पृथिवी में निवृति कला से प्रकट हो, जल में प्रतिष्टा कला से, अग्नि में विद्या कला से, पवन में शान्ति कला से, और आकाश में अति शान्ति कला से प्रकट हो यह कलायें जगत को धारन करती हैं यह निश्चय है परन्तु हे अम्ब ! तुम्हारे स्वरूप की जो कला (पदवी) हैं उन से तुम्हारा स्वरूप बहुत दूर है अर्थात इन स्वरूपों से तुम्हारा स्वरूप उत्कृष्ट है ॥ २६ ॥

यावत्पदं पदसरोजयुगं त्वदीयं ।
नाङ्गीकरोति हृदयेषु जगच्छरण्ये ॥
तावद्विकल्पजटिलाः कुटिलप्रकारा–
स्तर्कग्रहाः समयिनां प्रलयं न यान्ति ॥ २७ ॥

हे जगत रक्षा कारिणि! जब तक कि मत वादि तुम्हारे चरण कमल जोडी का स्थान अपने हृदय में स्वीकार न करें, तब तक उन के (दुर्बोध) दुर्ज्ञान वाले संशय और कुटिल आकार के तर्क वितर्क रूपी हट नाश नहीं हो जायेंगे ॥ २७ ॥

यद्देवयानपितृयानविहारमेके ।
कृत्वा मनः करणमंडलसार्वभौमम् ॥
याने निवेश्य तव कारणपञ्चकस्य ।
पर्वाणि पार्वति नयन्ति निजासनत्वम् ॥ २८ ॥

हे पार्वति! जिस योगी पुरुष ने शुक्ल कृष्ण गति का विहार (प्राणापान का संकोग) करके और मन और इन्द्रियों का भी जय करके तुम्हारे मार्ग में प्रवेश किया; वह योगी ब्रह्मा आदि पांच कारणों के शिर को अपने आसन में लाता है। अर्थात वह इन पांच कारणों से भी ऊर्ध गति प्रप्ति करता है ॥ २८ ॥

स्थूलासु मूर्तिषु महीप्रमुखासु मूर्तेः ।
कस्याश्चनापि तव वैभवमम्ब यस्याः ॥
पत्या गिरामपि न शक्यत एव वक्तुं ।
सासि स्तुता किल मयेति तितिक्षितव्यम् ॥ २६ ॥

हे अम्ब! पृथिवी तत्व से लेकर माया तत्व तक जितनी स्थूल मूर्तियां हैं, किसी में भी तुम्हारी विभूति के समान विभूति नहीं है, जिस विभूति के महिमा का वर्णन वाणियों के स्वामी बृहस्पति आदि न कर सके उसही को मैंने गायन किया इस लिए क्षमा करने की आशा रखता हों ॥ २६ ॥

कालाग्निकोटिरुचिमम्ब ! षडध्वशुद्धा-
वाऽऽप्लावनेषु भवतीमऽमृतौघवृष्टिम् ॥
श्यामां घटस्तनतटां सकलीकृतौ च ।
ध्यायन्त एव जगतां गुरवो भवन्ति ॥ ३० ॥

हे मातः! मंत्र वर्ण पद भवन कलातत्व यह षडध्व संसार है उसके शोधन(संहार)करने में तुम करोडों काल रूपी अग्नि के समान चमकने वाली; तम्हारे रूप में अन्तर्भाव करने वालों के लिए अमृत की वृष्टि बरसाने वाली; संसार की उत्पति के लिए प्रकाश और विमर्श रूप स्वरूप वाली श्यामा भगवती का जो ध्यान करते हैं वह जगत के गुरु बन जाते हैं ॥ ३० ॥

विद्यां परां कतिचिदम्बरमम्ब केचि–
दाऽनन्दमेव कतिचित्कतिचिच्च मायाम् ॥
त्वां विश्वमाहुरपरे वयमामनाम ।
साक्षादपारकरुणां गुरुमूर्तिमेव ॥ ३१ ॥

हे मातः! कई एक साधक तुमको परा विद्या (चिच्छक्ति) रूप से; कई आकाश (सर्व व्यापक) रूप से; कई आनन्द (आनन्दं ब्रह्म इति श्रुति) इस रूप से; कई माया (जगद्विकास) रूप से; कई जगत (विराठ) रूप से पुकारते हैं हम तु साक्षात पूर्ण दया रूप गुरु मूर्ति को ही मान कर प्रणाम करते हैं ॥ ३१ ॥

कुवलयदलनीलं बर्बरस्निग्धकेशं ।
पृथुतरकुचभाराक्रान्तकान्तावलग्नम् ॥
किमिह बहुभिरुक्तैस्त्वत्स्वरूपं परं नः ।
सकलभुवनमातः सन्ततं सन्निधत्ताम ॥ ३२ ॥

बार २ स्तुति अथवा विविध प्रकार के कीर्तन से क्या है, तुम्हारा जो बड़ा स्वरूप है उसी का सानिध्य नित्य मुझ साधक को प्राप्त हो ॥ ३२ ॥

इति पञ्चस्तव्यां चतुर्थोऽम्बास्तवः । समाप्तः ।

— ९४९ —

अजानन्तो यान्ति क्षयम्ऽवशमन्योन्यकलहै-
रमी मायाग्रन्थौ तव परिलुठन्त समयिनः ॥
जगन्मातर्जन्म ज्वर भय तमः कौमुदि! वयं ।
नमस्ते कुर्वाणाः शरणमुपयामो भगवतीम ॥ १ ॥

हे जगत्माता! अज्ञानी मनुष्य आपस में लडते हुए अवश मर जाते हैं। मत वादी तुम्हारी माया से मोहित होकर जगत के बन्धनों में फंस कर वारं वार संसार में जन्म लेते हैं। जन्म लेने से जो ज्वर उतपन्न होता है तद्रूप जो तम (अंधेरा) उस की तुम प्रकाश रूपी हो हम सब हाथ जोड २ कर उसी भगवती को शरण हो जाते हैं ॥१॥

वचस्तर्कागम्य स्वरसपरमानन्दविभव-
प्रबोधाकाराय द्युतितुलितनीलोत्परुचे ॥
शिवस्याराध्याय स्तनभरविनम्राय सततं ।
नमो यस्मै कस्मैचन भवतु मुग्धाय महसे ॥ २ ॥

वाणी और मन की अगोचर, चैतन्य स्वरूप, परमानन्द अवस्था रूप, उत्कृष्ट ज्ञान स्वरूप, नील कमल के समान दीप्ति वाली, शिव की आराध्य देवी, ज्ञान क्रिया रूप स्तनभार को जगत आप्यायन के लिए जुकाती हुई किसी अलौकिक अन्तर्भूत तेज स्वरूप को सदा सर्वदा नमसकार हो ॥ २ ॥

लुठद्गुञ्जाहारस्तनभरनमन्मध्यलतिका ।
मुदञ्चद्धर्माम्भः कणगुणितनीलोत्पलरुचम ॥
शिवं पार्थत्राण प्रवण मृगयाकारगुणितं ।
शिवामऽन्वग्यान्तीं शवरमऽहमन्वेमि शवरीम ॥३॥

लटकते हुए रतियूँ के हार वाली । स्तन वार से झुकी हुई (मध्यलता)छाती वाली । निकले हुए पसीनूँ के नीले कमल समान चमकते हुए वूँदां वाली । अर्जुन देव की रक्षा पर झुके हुए शिकारी रूप शिव के पीछे २ जाने वाली शिकारिणी शिवा, को मैं प्रणाम करता हों ॥ ३ ॥

मिथः केशाकेशिप्रधन निधनास्तर्कघटना—
बहुश्रद्धाभक्तिप्रणयविषयाश्चाऽतविधयः ।
प्रसीद प्रत्यक्षीभव गिरिसुते! देहि शरणं ॥
निरालम्बं चेतः परिलुठति पारिप्लवामदिम ॥ ४ ॥

तर्किक लोक वाद विवाद में आपस में केशा कर्षण करते हुए लड मरते हैं । वहुत से पुरुष धन पदार्थ की प्राप्ति के लिए श्रद्धा और भक्ति से आपकी पूजा करते हैं । हे पर्वत की पुत्री! मुझ विना सहाह के ऊपर आपही संतुष्ठ हो जाओ, सामने प्रकट होकर शरण दे दो । यः मेरा मन चारो ओर घूमते २ वहुत दीन हुआ है ॥४॥

शुनां वा वह्नेर्वा खखपरिषदो वा यदशनं ।
कदा केन क्वेति क्वचिदपि न कश्चित्कलयति ॥
अमुष्मिन्विश्वासं विजहिहि ममाह्नाय वपुषि ।
प्रपद्येथाश्चेतः सकलजननीमेव शरणम ॥ ५ ॥

यह शरीर कुत्तों या अग्नि या पंक्षियों का भक्ष है। (कश्चित) कोई (कुचिदऽपि) कभी भी गिन्ती में नही लाता है, कि यह शरीर (कदा) कब,(केन)किस प्रकार और(कु)क्या है (इस लिए) हे मन! निश्चय से तुम इसकी श्रद्धा वा आशा छोड दो और जगत्माता के शरण में आजाओ ॥ ५ ॥

अनाद्यन्ताभेदप्रणयरसिकापि प्रणयिनी ।
शिवस्यासीर्थस्त्वं परिणयविधौ देवि! गृहिणी ॥
सवित्री भूतानामपि यदुदभूः शैलतनया ।
तदेतत्संसारप्रणयनमहानाटकसुखम् ॥ ६ ॥

अनादि अनन्त तथा अभेद प्रेम स्वरूप होने परभी शिव की प्रणय वती हो। विवाह विधि में तुम उसकी ग्रहिणी हो। पर्वत की पुत्री हो कर भी जीवों की उत्पत्ति में लगी हो। यह सब संसार प्रेम के महा नाटक का सुख है॥ ६ ॥

ब्रुवन्त्येके तत्त्वं भगवति! सदन्ये विदुरसत् ।
परे मातः! प्राहुस्तव सदसदन्ये सुकवय ॥
परे नैतत्सर्वं समभिदधते देवि! सुधिय-
स्तदेतत्त्वन्मायाविलसितमशेषं ननु शिवे! ॥७॥

हे भगवतिः सांख्य वाले तुम को तत्व रूप कहते हैं । बौद्ध (सत्) शिव रूप । तार्किक (असत्) जगत रूप कहते हैं । हे मातः शाक्त मार्ग के बुद्धिमान[सदऽसत्]शिव शक्ति रूप । हे देवि! वेदान्ती कहते हैं, कि कुछ भी नहीं है आत्मा से भिन्न । हे शिवे! अछे बुद्धि मानों का निश्चय है कि यह सब तुम्हारी माया का ही विस्तार है ७

तडित्कोटिज्योतिर्द्युति दलितषड्ग्रन्थि गहनं ।
प्रविष्टं स्वाधारं पुनरपि सुधावृष्टिवपुषा ॥
किमऽप्य ष्टात्रिंशत्किरणसकलीभूतमऽनिशं ।
भजे धाम श्यामं कुचभरनतं बर्बरकचम् ॥ ८ ॥

करोडों विजलियों के समान दीप्ति की चमक से षठ् ग्रंथि रूप जंगल को छिन भिन्न करके स्वाधार [द्रव पद] में प्रवेश करते ही वापस अमृत वर्षण रूप शरीर से असामान्य अठतीस कला रूपजगत को विकसित हुई ज्ञान क्रिया रूप स्तन वार से झुकी हुई मेघ वर्ण श्याम तेज की मैं भजना करता हों ॥ ८ ॥

चतुष्पत्रान्तः षड्दलभगपुटान्तस्त्रिवलय-
स्फुरद्विद्युद्वह्नि द्युमणिनियुताभ द्युतियुते ॥
षडश्रं भित्वादौ दशदलमऽथ द्वादशदलं ।
कलाश्रं च द्व्यश्रं गतवति! नमस्ते गिरिसुते ॥९॥

गुदास्थान में मूलाधार चतुर्दल कमल के मध्यगत त्रिकोण उसके अंतर्गत परा शक्ति कुण्डलिनी सर्पाकार उर्धमुखी सार्ध त्रिवल सहस्र बाल सूर्य समान दीप्तिमान, करोडों विजलीयों के तुल्य चमक वाली, जो पहले षट्दल, फिर दशदल, फिर द्वादशदल फिर षोडश-दल कमलों को काटती हुई द्विदल पर पुहंची है, ऐसे स्वरूप को नमस्कार करता हों॥ ९ ॥

कुलं केचित्प्राहुर्वपुरऽकुलमऽन्ये तव बुधाः ।
परे तत्सम्भेदं समभिदधते कौलमऽपरे ॥
चतुर्णामऽप्येषामुपरि किमपि प्राहुरऽपेर ।
महामाये! तत्त्वं तव कथमऽमी निश्चिनुमहे ॥१०॥

कई ज्ञानी पुरुष तुमको (कुल) षट् त्रिंशत् तत्वात्मक कहते हैं। कई बुद्धिमान (अकुल) परम शिव रूप ॥ कई आचार्य (कुल अकुल) शिव शक्ति रूप पुकारते हैं। कई (कौल) सब तत्वों का संयोग वा पूर्णाहंता स्वरूप कहते हैं। कई इन चारों रूपों से भी उपर असामान्य रूप कहते हैं। हे महा मया! तुम्हारा तत्व किस तरह से निश्चय में आसकता है॥ १०॥

षडऽध्वारण्यानीं प्रलयरविकोटिप्रतिरुचा ।
रुचा भस्मीकृत्य स्वपद् कमलप्रह्वशिरसाम् ॥
वितन्वानः शैवं किमऽपि वपुरिन्दीवर रुचिः ।
कुचाभ्यामाऽनम्रः शिवपुरुषकारो विजयते ॥११॥

षट् मार्ग (भवन तत्व- कला वर्ण, पद,) रूप जंगल को प्रल
काल के करोडों सूर्यों के तुल्य प्रकाश से जलाकर भस्म करने वा
अपने नत मस्तक भक्तों को कल्यान चाहने वाली शिव की असामान्
रूप नील कमल जैसी दीप्ति वाली योग और ध्यान रूप स्तनों
झुकी हुई शिव की स्वातन्त्र्य शक्ति नितराम जय होवे ॥ ११ ॥

प्रियङ्गुश्यामाङ्गीमऽरुण तर वासःकिसलयां ।
समुन्मीलन्मुक्ताफल बहुल नेपथ्यकुसुमाम् ॥
स्तनद्वन्द्वस्फारस्तबक नमितां कल्पलतिकां ।
सकृद्ध्यायन्तस्त्वां दधति शिवचिन्तामणिपदम् १२

निर्मल और श्याम स्वरूप अति रक्त वस्त्रो को धारण करत
हुई, पत्र सहित मोती के फल वाले अनेक सुगंध वाले विकसित पुष्पों
से अलंकृत, ज्ञान क्रिया रूप दो स्तनों के भारे गुछों से झुकी हुई, कल्प
वृक्ष की लता जैसी तुम को जो एक वार ध्यान करते हैं। वह शिव
रूप चिंतामन रत्न का स्थान पाते हैं ॥ १२ ॥

प्रकाशानन्दाभ्यामऽविदितचरीं मध्यपदवीं ।
प्रविश्यैतद्द्वन्द्वं रविशशिसमाख्यं कवलयन् ॥
प्रविश्योर्ध्वं नादं लय दहन भस्मीकृतकुलः ।
प्रसादात्ते जन्तुः शिवमकुलमम्ब! प्रविशति ॥१३॥

ज्ञान क्रिया से (अविदित चरीं वा अज्ञात हर्या) विमुख रह कर सुषम्णा मार्ग में प्रवेश करके, इसी चन्द्र सूर्य नामी प्राणापान के द्वन्द को ग्रास करके (ऊर्ध्वनाद) पर प्रकाश में प्रवेश करके(लय) चिद्विमर्श के (दहन) आग से (कुलं) अहं भाव को भस्म करके तुम्हारे अनुग्रह से साधक जन (अकुलं) अ।विनाशी शिव पद में प्रवेश करते हैं ॥ १३ ॥

षडाधारावर्तैरऽपरिमितमंत्रोर्मिपटलै-
श्चलन्मुद्राफेनैर्बहुविधलसद्दैवतझषैः ॥
क्रमस्रोतोभिस्त्वं वहसि परनादामृतनदी ।
भवानि! प्रत्यग्रा शिवचिदऽमृताऽब्धिप्रणयिनी १४

हे भवानि! षट शास्त्र रूप घुंत्ररों से असंख्य मंत्र रूप लहरों की मालाओं से, मुद्रा रूप चंचल फेनों से वहुत प्रकार के भाग्य वा कर्म रूप मत्स्यों से, क्रम रूप छोटी नालियों से पूर्ण, परनाद रूप अमृत नदी वहती हुई तुम शिव रूप चित् समुद्र में बड़े वेग से प्रेम करती हो (वहती हो) ॥ १४ ॥

महीपाथोवह्निश्वसन वियदात्मेन्दुरविभि-
र्वपुर्भिर्ग्रस्तांशैरऽपि तव कियानम्ब! महिमा ॥
अमून्यालोक्यन्ते भगवति! न कुत्राप्यणुतरा-
मऽवस्थां प्राप्तानि त्वयि तु परमव्योमवपुषि ॥१५॥

पृथिवि, जल, अग्नि, वायू आकाश जीवात्मा, चंद्रमा सूर्य जैसे [अमून्य वपुर्भिः] इन आकृतियो से, जो तुम में संपूर्ण ओत प्रोत हैं तुम्हारा महिमा [विस्तार] हे मातः! कितना है, अनुभव नहीं होता है। हे भगवति! तुम्हारे परमाकाश में अनुमात्र भी उनकी अवस्था वा भाव की गिन्ती वजूद में नहीं आती है। किन्तु तुम अचर, अप्रमेय, अखंड, परन्तु वह चर प्रमेय और अवयवी हैं ॥ १५ ॥

मनुष्यास्तिर्यञ्चो मरुत इति लोकत्रयमिदं ।
भवाम्भोधौ मग्नं त्रिगुणलहरींकोटिलुठितम ॥
कटाक्षश्चेदत्र क्वचन तव मातः! करुणया ।
शरीरी सद्योऽयं व्रजति परमानन्दतनुताम ॥ १६ ॥

हे मातः! मनुष्य, पशुपंक्षी और देवता यह तीन लोक, संसार समुद्र में डूबे हुए हैं। और सतु, रज, तम, तीन गुणों की करोडों लहरियों में धूमते हैं। यदि इस में आप की दया दृष्टि होती है तु यह शरीर धारी झट्ट पट्ट परमानन्द स्वरूप पाते हैं ॥ १६ ॥

कलां प्रज्ञामाद्यां समयऽमनुभूतिं समरसां ।
गुरुं पारम्पर्यं विनयमुपदेशं शिवकथाम् ॥
प्रमाणं निर्वाणं परम मतिभूतिं परगुहां ।
विधिं विद्यामाहुः सकलजननीमेव मुनयः ॥१७॥

मुणि जन तुझ जगत्माता को क्रिया शक्ति, ज्ञान शक्ति, आदि भूत, सदाचार, अनुभव स्वरूप, सब में एकरस, उपदेशक, परं परा उपदेश, शिक्षा, गुप्त वार्ता कथन, भगवत्कथा, प्रत्यक्ष, अनुमान उपमा रूप इप्रमाण, मोक्ष, परमसिद्धान्त, शास्त्रमर्याधा, और विद्या शक्ति, इन नामों से पुकारते हैं ॥ १७ ॥

प्रलीने शब्दौघे तदऽनुविरते बिन्दुविभवे ।
ततस्तत्त्वे चाष्टध्वनिभिरऽनुपाधिन्युपरते ॥
श्रिते शाक्ते पर्वण्यऽनुकलित चिन्मात्रगहनां ।
स्वसंवित्तिं योगी रसयति शिवाख्यां परतनुम् १८

योगि जन प्रत्याहार से शब्दादि विषयों का निरोध करके (बिन्दुविभवे विरते) पुर्यष्ट ज्ञान को चिदाकाश में लीन करके, (तत्त्वे) आत्म स्वरूप को अष्ठ वर्गात्मक उपादि रहित नाद रूप परामर्श में उपराम करते हुए शाक्त मार्ग का आश्रय लेते हुए चिन्मात्र रहस्य का विमर्श करते हुए स्वाभाविक शिव स्वरूप का आस्वाद करते हैं ॥ १८ ॥

परानन्दाकारां निरऽवधि शिवैश्वर्यवपुषं ।
निराकार ज्ञान प्रकृतिमऽनवच्छिन्न करुणाम् ॥
सवित्रीं भूतानां निरऽतिशयधामा स्पदपदां ।
भवो वा मोक्षो वा भवतु भवतीमेव भजताम १९

परावस्था मूर्ति, निरावर्ण, निर्विकार, शिव की ऐश्वर्य मूर्ति, निराकार ज्ञान मूर्ति, निरन्तर दया मूर्ति, जीवों को उत्पन्न करने वाली परम शिव के पद पर आरूढ़ होने वाली, ऐसे तुम्हारे स्वरूप को भजन करने वाले साधकों को संसार और मोक्ष पद एक जैसा है ॥ १९ ॥

जगत्काये कृत्वा तमऽपि हृदये तच्च पुरुषे ।
पुमांसं बिन्दुस्थं तमऽपि परनादाख्यगहने ॥
तदेतद्ज्ञानाख्ये तदऽपि परमानन्दविभवे ।
महाव्योमाकारे त्वदनुभवशीलो विजयते ॥ २० ॥

हे जगतमाता! जगत काया में, काया को हृदय में हृदय को पुरुष वा जीवात्मा में, जीवात्मा को बिंदु वा चितस्वरूप में, विन्दु को दुर्गम नाद वा विमर्श रूप में, नाद को ज्ञान में ज्ञान को स्वात्म प्रकाश में पूर्ण करके हे महाकाश मूर्ति! तुम्हारे अनुभव शील भक्त जन तुम्हारे ऐसे शून्य रूप में लय वा तन्मय होते हैं ॥ २० ॥

विधे विद्ये वेद्ये विविधसमये वेदजननि।
विचित्रे विश्वाधे विनयसुलभे वेदगुलिके॥
शिवाज्ञे शीलस्थे शिवपदवदान्ये शिवनिधे।
शिवे मातर्मह्यं त्वयि वितर भक्तिं निरुपमाम २१

हे क्रिया शक्ति रूपे! विद्या शक्ति रूपे! विविध सिद्धान्त वा आचार रूपे! हे वेद मातः! विचित्र रूपे! हे जगत्मातः! हे भक्ति सुलभे! वेद सार भूते! हे आज्ञा रूपे! स्वभाव रूपे! शिव सायुज्य दायिने! हे कल्याण कोशे! शिव पति! हे मातः! मुझे अपनी अचल भक्ति बडावो॥ २१॥

विधेर्मुण्डं हृत्वा यदकुरुत पात्रं करतले।
हरिं शूलप्रोतं यदगमयदंसाभरणताम्॥
अलंचक्रे कण्ठं यदपि गरलेनाम्ब गिरिश।
शिवस्थायाः शक्तेस्तदिदमखिलं ते विलसितम् २२

ब्रह्मा का शिर काटकर उसको हाथ का पात्र बनाया। विष्णु का शिर त्रिशूल में परोकर कन्धे का भूषण बनाया। हे अम्ब! महादेव ने गले को विष से सजाया है। जो शक्ति शिव में है। वह सब यह जगत है। जिस को तुम ने विकसित किया है॥ २२॥

विरिञ्च्याख्या मातः! सृजसि हरिसंज्ञा त्वमवसि।
त्रिलोकीं रुद्राख्या हरसि विदधासीश्वरदशाम ॥
भवन्ती सादाख्या शिवयसि च पाशौघदलिनी ।
त्वमेवैकानेका भवसि कृतभेदैर्गिरिसुते ॥ २३ ॥

हे मातः! ब्रह्मा रूप से तीन लोकों की उत्पत्ति, विष्णु रूप से पालन, रुद्र रूप से संहार करती हो। तुमही ईश्वर देशा को धारण करती हो। सदा शिव रूप वन कर पाश समूहों को काट कर शिव के साथ तादात्म्य पदवी देती हो। हे गिरि सुते! तुम एक होकर भी भेद दृष्टि से अनेक होती हो ॥ २३ ॥

मुनीनां चेतोभिः प्रमृतिकाषायैरपि मनाग् ।
अशक्ये संस्प्रष्टुं चकितचकितैरम्ब सततम् ॥
श्रुतीनां मूर्धानः प्रकृतिकठिनाः कोमलतरे ।
कथं ते विन्दन्ते पदकिसलये पार्वति पदम ॥२४॥

हे अम्ब! जिन मुणियों ने चित्त से राग द्वेषादिकों को मथन किया है। वह अत्यन्त डर २ कर अनुमात्र भी स्पर्श करने को असमर्थ हैं। (तिसपर)उपनिषदादि ग्रन्थ जो स्वभाव से ही(कठिन) दुर्वोध हैं, हे पार्वति! वह किस प्रकार तुम्हारे कोमल चरण कमलों के स्थान को पा सकते हैं ॥ २४ ॥

तडिद्वल्लीं नित्याममृतसरितं पाररहितां ।
मलोत्तीर्णां ज्योत्स्नां प्रकृतिमगुणग्रन्थिगहनाम ॥
गिरां दूरां विद्यामविनतकुचां विश्वजननी-
मपर्यन्तां लक्ष्मीमभिदधति सन्तो भगवतीम २५

भगवती को साधक जन नित्य विद्युल्लता रूप अपार अमृत नदी रूप, निर्मल चांदनी रूप गुण त्रिय रहित उग्रडालिनी रूप, अनिर्वचनी विद्या रूप, कुमारी शोडशी रूप, जगत्माता अनवच्छि लक्ष्मी रूप से पुकारते हैं ॥२५॥

शरीरं क्षित्यम्भःप्रभृतिरचितं केवलमिदं ।
सुखं दुःखं चायं कलयति पुमांश्चेतन इति ॥
स्फुटं जानानोऽपि प्रभवति न देही रहयितुं ।
शरीराहंकारं तव समयबाह्यो गिरिसुते ॥ २६ ॥

यह शरीर तु पृथिवी जल आदि महा भूतो से वना हुवा है । चेतन होने से सुख दुःख को आनुभव करता है । हे गिरिसुते! यह प्राणी स्पष्ट रुप से जानता भी है परन्तु तुम्हारे अनुग्रह विना शरीर के अभिमान को नही छोढ सकता है ॥ २६ ॥

पिता माता भ्राता सुहृदनुचरः सद्म गृहिणी ।
वपुः पुत्रो मित्रं धनमपि यदा मां विजहति ॥
तदा मे भिन्दाना सपदि भयमोहान्धतमसं ।
महाज्योत्स्ने मातर्भव करुणया सन्निधिकरी ॥२७॥

बाप मां भाई बन्धु, नौकर, घर, स्त्री, शरीर बेटा मित्र तथा धन, छोड देते हैं। तु उस समय हे चित्प्रकाशात्मक मातः यम भय तथा गाढ अज्ञान के अंधकार में डूबे हुए मुझ को दया करके सन्मुख होकर सहाय करो ॥ २७ ॥

सुता दक्षस्यादौ किल सकलमातस्त्वमुदभूः ।
सदोषं तं हित्वा तदनु गिरिराजस्य तनया ।
अनाद्यन्ता शम्भोरऽपृथगपि शक्तिर्भगवती ।
विवाहाज्जायासीत्यहह चरितं वेत्ति तव कः ॥२८॥

हे सकल जगत्मातः! तुम पहले दक्षप्रजापत की पुत्री हुई। उस को दोषी जान कर छोड दिया। फिर हिमालय की पुत्री बनी हे भगवती! तुम नित्योद्यत शम्भु के साथ अनादि अभिन्न पराशक्ति हो के भी विवाह पर उस की पत्नी बनी। तुम्हारे चरित्रों को कोन जाने कोई नहीं जानता यह आश्चर्य है ॥ २८ ॥

कणास्त्वद्दीप्तीनां रविशशिकृशानुप्रभृतयः।
परं ब्रह्म क्षुद्रं तव नियतमानन्दकणिका॥
शिवादि क्षित्यन्तं त्रिवलयतनोः सर्वमुदरे।
तवास्ते भक्तस्य स्फुरसि हृदि चित्रं भगवति २९

हे भगवति! सूर्य चन्द्रमा अग्नि आदि तुम्हारे दीप्ति के कण हैं। परं ब्रह्म निश्चय करके तुम्हारे आनन्द कणों के सामने सूक्ष्म तर हैं। शिव तत्व से पृथिवी तत्व तक समस्त प्राणियों में कुण्डलिनिरूप से तुम स्थित हो। तुम भक्तों के हृदय में प्रकट रूप से दिखाई देती हो यह आश्चर्य है॥ २९॥

त्वया यो जानीते रचयति भवत्त्वैव सततं।
त्वयैवेच्छत्यम्ब! त्वमसि निखिला यस्य तनवः॥
गतः साम्यं शम्भुर्वहति परमं व्योम भवती।
तथाप्येवं हित्वा विहरति शिवस्येति किमिदम् ३०

हे अम्ब! तुम्हारे हेतु से जो नित्य जाना जाता है। तुम्हारे हेतु से जो जगत की रचना करता है। तुम्हारे ही से जो इच्छा करता है। तुम जिसके समस्त अवयव (अष्ठ मूर्तियां)हो। तुम्हारे सन्मुख हो जाने से वही शम्भू विकास में आता है। और तुम को छोड देने से संकुचित हो कर परमाऽकाश में लीन होता है। शिव के साथ तेरा कैसा आश्चर्य मय विहार है॥ ३०॥

पुरः पश्चादन्तर्बहिरपरिमेयं परिमितं ।
परं स्थूलं सूक्ष्मं सकुलमकुलं गुह्यमगुहम् ॥
दवीयो नेदीयः सदसदिति विश्वं भगवती ।
सदा पश्यन्तत्याज्ञां वहसि भुवनक्षोभजननीम ३१

आगे, पीछे, भीतर, बाहिर अपरिमित (बडी) परिमित (छोटी) (पर) सब से बडा (स्थूल) मोटा (सूक्ष्म) महीन (सकुल) शक्ति रूप (अकुल) शिव रूप (गुप्त) पूशीदा (प्रकट) जाहिर, समीप, दूर सत् रूप, असत् रूप यह द्वन्द्व कलना रूप विश्व है, हे भगवति ! तुम तीन लोक के (क्षोभ) सृष्टि स्थिति संहार करने वाली हो। तुम इस जगत पर सदा आज्ञा करने वाली दिखाई देती हो ॥ ३१ ॥

मयूखाः पूष्णीव ज्वलन इव तद्दीप्तिकणिकाः ।
पयोधौ कल्लोलप्रतिहितमहिम्नीव पृषतः ॥
उदेत्योदेत्याम्ब त्वयि सह निजैस्तात्त्विककुलै-
र्भजन्ते तत्त्वौघाः प्रशममनुकल्पं परवशाः ॥३२॥

सूर्य के किरणों के मानन्द अग्नि की चिंगारियों के मानन्द । समुद्र के महा तरंगों के क्षोभ से उत्पन हुए जो असंख्य बिन्दु उन के मानन्द । हे अम्ब! तुम में ही शिवादि क्षति पर्यन्त तत्वात्मक जगतों के समूह प्रति कल्प बार बार

अपने अपने कर्यों सहित उत्पन हो होकर नाश होते जाते हैं ॥३२॥

विधुर्विष्णुर्ब्रह्मा प्रकृतिरऽणुराऽत्मा दिनकरः ।
स्वभावो जैनेन्द्रः सुगत मुनिराऽकाशमऽनिलः ॥
शिवः शक्तिश्चेति श्रुतिविषयतां तामुपगतां ।
विकल्पैरेभिस्त्वामऽभिदधति सन्तो भगवतीम् ३३

चन्द्रमा, विष्णु, ब्रह्मा, माया, जीव, जीवात्मा, सूर्य, स्वभाव, जैनदेव, बुद्ध देव, मुनि, आकाश, वायु, शिव, और शक्ति, यः सब अपने अपने विकल्पों के अनुसार वेद विषय बने हुए नामों से, सन्तजन तुझ भगवती को पुकारते हैं ॥ ३३ ॥

प्रविश्य स्वं मार्गं सहजदयया दैशिकदृशा ।
षडध्वध्वान्तौघ च्छिदुर गणनातीतकरुणाम् ॥
परानन्दाकारां सपदि शिवयन्तीमपि तनुं ।
स्वमात्मानं धन्याश्चिरमुपलभन्ते भगवतीम ॥३४॥

भाग्यवान पुरुष स्वाभाविक दया और सद्गुरु की अनुग्रह दृष्टि से शाक्त मार्ग में प्रवेश कर के षट् मार्ग (भवन तत्व कला वर्ण पद मंत्र) वाले संसार के अंधकार को काटने में अत्यन्त दयाशील परमानन्द मूर्ति और कल्याण मूर्ति भगवती को अपने आप में ही (चिरं) नित्योद्यत पाते हैं ॥ ३४ ॥

शिवस्त्वं शक्तिस्त्वं त्वमसि समया त्वं समयिनी ।
त्वमात्मा त्वं दीक्षा त्वमयमऽणिमादिर्गुणगणः ॥
अविद्या त्वं विद्या त्वमऽसि निखिलं त्वं किमपरं ।
पृथक्तत्त्वं त्वत्तो भगवति न वीक्षामह इमे ॥३५॥

हे भगवति! तुम शिव हो- शक्ति हो- तुम समय (काल) रूप हो, तुम समय जानने वाली हो- तुम आत्मा हो तुम दीक्षा हों- तुम अणिमादि गुण समूह हो- तुम विद्या और अविद्या हो- तुम समस्त जगत के पदार्थ हो, तुम से पृथक कुछ भी तत्व नहीं जो हमारे दृष्टि में प्रत्यक्ष रूप से दिखाई दे ॥ ३५ ॥

असंख्यैः प्राचीनैर्जननि जननैः कर्मविलया-
द्वते जन्मन्यन्त्यं गुरुवपुषमाऽसाद्य गिरिशम् ॥
अवाप्याज्ञां शैवीं क्रमतनुरपि त्वां विदितवान् ।
नयेयं त्वत्पूजास्तुतिविरचनेनैव दिवसान् ॥ ३६ ॥

हे मातः! संचित कर्मों के समाप्त होने पर अनगिनत पुरातन जन्मों से इस जन्म के अन्त (नाश) होने पर गुरु शिव के स्वरूप को पाकर (तन्मय होकर), शक्ति स्वरूप को पाकर, क्षुद्र प्राणी होकर भी, तम्हारे स्वरूप को जानता था उस कारण तम्हारी पूजा की जो स्तुति है ॥ उसी के बनाने में दिनों को बिता दूंगा ॥ ३६ ॥

यत्षट्पत्रं कमलमुदितं तस्य या कर्णिकाख्या ।
योनिस्तस्याः प्रथितमुदरे यत्तदोङ्कारपीठम् ॥
तस्मिन्नन्तः कुचभरनतां कुण्डलीतः प्रवृत्तां ।
श्यामाकारां सकलजननीं सन्ततं भावयामि ॥३७

स्वाधिष्ठान चक्र में छः पत्तों वाले कमल का जो उदय है। उस की जो कर्णिका (बीजकोश) रूप योनि है उस के मध्य में जो प्रसिद्ध ओंकार पीठ है। उस के भीतर तिरछी आकार वाली सर्पिनी जो प्रकट है। ऐसी श्याम सुन्दर मूर्ति धारण करने वाली जगत्माता को मैं (साधक) भावना [चिन्तन] करता हों ॥ ३७ ॥

भुवि पयसि कृशानौ मारुते खे शशाङ्के ।
सवितरि यजमानेऽप्यष्टधा शक्तिरेका ॥
वहति कुचभराभ्यां या विनम्रापि विश्वं ।
सकलजननि सा त्वं पाहि मामित्यवश्यम ॥ ३८॥

पृथिवी जल अग्नि वायु आकाश चन्द्रमा (मन) रवि (बुद्धि) यजयान(अहंकार) यह एक ही शक्ति आठ मूर्तियों में बांटी गई हैं। वह एक ही शक्ति जीव और भूत रूप संसार को धारण और पालन करती है, हे जगत्मातः वही तू अवश्य मेरा पालन करो ॥ ३८ ॥

इति श्री पंचस्तव्यां सकलजननीस्तवः पंचमः ।

समाप्ता चेयं पञ्चस्तवी ॥

श्री विघ्नराज चरणं प्रणमामि नित्यं,
रक्तोत्पलाभ मृनिष्ठां दुरितोघ शान्त्यै
वाग्वादिनीं च परमां परमार्ति हर्तीं
वाग्स्फूर्तये विमल बुद्धि सुख प्रदात्रीम्

स्तोत्र इन्द्र कृत ॐ महा लक्ष्म्यै नमः

नमस्तेऽस्तु महामाये, श्री पीठे सुर पूजिते
शंख चक्र गदा हस्ते, महा लक्ष्मि नमोऽस्तुते १,
नमस्ते गरुडा रूढे, कोलासुर भयंकरि
सर्व पाप हरे देवि, महा लक्ष्मि नमोस्तुते २,
सर्वज्ञे सर्व वरदे, सर्व दुष्ट भयंकरि
सर्व दुःख हरे देवि, महा लक्ष्मि नमोस्तुते ३,
सिद्धि बुद्धि प्रदे देवि, भुक्ति मुक्ति प्रदायिनि
मंत्र मूर्ते सदा देवि, महा लक्ष्मि नमोस्तुते ४,
आद्यन्त रहिते देवि, आदि शक्ति महेश्वरि
योगजे योग संभूते, महा लक्ष्मि नमोस्तुते ५,
स्थूल सूक्ष्म महा रौद्रे, महा शक्ति महोदरे
महा पाप हरे देवि, महा लक्ष्मि नमोस्तुते ६,
पद्मासन स्थिते देवि, परं ब्रह्म स्वरूपिने
परमेश्वरि जगन्मातः, महा लक्ष्मि नमोस्तुते ७
श्वेताम्बर धरे देवि, नाना लंकार भूषिते
जगत्स्थिते जगन्मातः महा लक्ष्मि नमोस्तुते ८
महा लक्ष्म्यष्टकं स्तोत्रं यः पठेद् भक्ति मान्नरः
सर्व ... दे म... ... प्राप्नोति सर्वदा।

एक कालं पठेन्नित्यं, महापाप विनाशनम्

द्विकालं यः पठेन्नित्यं, धन धान्य समन्वितः

त्रिकालं यः पठेन्नित्यं, महा शत्रु विनाशनम्

महा लक्ष्मीः भवेन्नित्यं, प्रसन्ना वरदा शुभा ॥

वि. सं. २०२० सप्तर्षि संवत् ५०३९ कार्तिक कृष्ण अमावस्यायां

प्रातः राजानक निरंजनेन चमन लाल स्वार्थे लिखितम्

महा लक्ष्म्यै नमः

नमस्ते भगवत्यंब, नमामि ते परात्परे

शुद्ध सत्व स्वरूपेच, कोपादि परि वर्जिते १,

उत्तमे सर्व साध्वीनां, देवीनां देव पूजिते

त्वया विना जगत्सर्व, मृत तुल्यं च निष्फलं २,

सर्व संपत्स्वरूपा त्वं, सर्वेषां सर्व रूपिणी

रासेश्वर्यधि देवी त्वं, त्वत्कला सर्व योषिता ३,

कैलासे पार्वती त्वं च, क्षीरोदे सिन्धु कन्यका

स्वर्गे च स्वर्ग लक्ष्मी त्वं, मर्त्य लोके लक्ष्मीच भूतले

वैकुण्ठे च महा लक्ष्मी, देव देवी सरस्वती

गंगा च तुलसी त्वं च, सावित्री ब्रह्म लोकतः

कृष्ण प्राणाधि देवी त्वं, गो लोके राधिका स्वयं

रासे रासेश्वरी त्वंच [illegible] से भिते ४,

कृष्णप्रिया त्वं भांडीरे [illegible] ने

विरजा चंपक वने, शृंगे च सुन्दरी ७,
पद्मावती पद्म वने, मालती मालती वने
कुन्द दन्ती कुन्द वने, सुशीला केतके वने ८,
कदंब माला त्वं देवी, कदंब कानने प्रिय
राज्य लक्ष्मी राज गेहे, गृह लक्ष्मी गृहे गृहे ९
इति लक्ष्मी स्तवं पुण्यं, हर्षि देवैः कृतं शुभं
यः पठेत्प्रातरुत्थाय, स वै सर्वं लभेत् ध्रुवम्
अभार्यो लभते भार्या, विनीतां च यशस्विनीं
सुशीलां सुन्दरीं रम्यां, अति सुप्रिय वादिनीम्
पुत्र पौत्र वतीं शुद्धां, कुलजां कोमलां वराम्
अपुत्रो लभते पुत्रं, वैष्णवं चिर जीविनम्
परमैश्वर्य युक्तं च, विद्या वन्तं यशस्विनम्
भ्रष्टराज्यो लभेद्राज्यं, भ्रष्टश्री लभते श्रियम्
हत बन्धुः लभेद्बन्धुं, धन भ्रष्टो लभेत् धनम्
कीर्ति हीनो लभेत् कीर्तिं, प्रतिष्ठां च लभेत् ध्रुवम्
सर्व मंगलदं स्तोत्रं, शोक संताप नाशनम्
हर्षानन्द करं शाश्वत्, धर्म मोक्ष सुहृत् पदम्॥

Minor Date of Birth: 22-1-1963

राष्ट्रीय बचत पत्र

National Savings Certificate प्रारम्भ 26-11-1965

एक हज़ार रुपये के पांच पत्र

संख्या नं०

१ 10NS/ F/0 297038 1000)

२ 10NS/ F/0 297039 1000)

३ 10NS/ F/0 297040 1000)

४ 10NS/ F/0 297041 1000)

५ 10NS/ F/0 297042 1000)

भारत सरकार अभिनव कमल रैणा S/o चमनलाल रैणा को तारीख 26-11-1975 को 1000) वाले पत्र पर 1000) देने का वचन देती है

डाकघर = बड़ियार बाला

जारी करने की तारीख = 26-11-1965

रजिस्ट्री संख्या: 3

Minor: Date of Birth: 26-8-1965

राष्ट्रीय बचत पत्र

National Savings Certificate जारी 9-2-1966

एक हजार रुपये के पांच पत्र

संख्या	नं०		
१	10NS/F/O	297627 ~~297627~~	1000)
२	10NS/F/O	297625	1000)
३	10NS/F/O	297582	1000)
४	10NS/F/O	297581	1000)
५	10NS/F/O	297583	1000)

भारत सरकार राकेश रैणा c/o चमन लाल रैणा को तारीख 9-2-1976 को 1000) वाले पत्र पर 1800) देने का वचन देती है

डाकघर: बढ़ियार बाला

जारी करने की तारीख: 9-2-1966

रजिस्ट्री संख्या: १५ (15)

श्रीः

भवानीनामसहस्रस्तवराजः

इन्द्राक्षीस्तोत्रं

गौरीदशकम

सम्पादक

सर्वानन्द चरागी बी. ए., एल. टी.

संशोधितं

पं. गोविन्द भठ हण्डू

Shree Bhawani Sahasrastavraja

Edited by

S. N. CHARAGI, B. A, L. T.

28/1998

2nd Edition 1000.   Price 0- 2- 0

ओं

अथ

भवानीनामसहस्रस्तवराजः ।

ओं नमो भवान्यै ।

ओं नमो भगवत्यै ।

ओं शङ्खत्रिशूलशरचापकरां त्रिनेत्रां
तिग्मेतरांशुकलया विकसत्किरीटाम् ।
सिंहस्थितामसुरसिद्धनुतां च दुर्गां
दूर्वानिभां दुरितदुःखहरीं नमामि ॥१॥

अकुलकुलपतन्ती चक्रमध्ये स्फुरन्ती
मधुरमधुपिबन्ती कण्टकान्भक्षयन्ती ।
दुरितमपहरन्ती साधकान्पोषयन्ती
जयति जगति देवी सुन्दरी क्रीडयन्ती ॥२॥

चतुर्भुजामेकवक्त्रां पूर्णेन्दुवदनप्रभाम् ।
खड्गशक्तिधरां देवीं वरदाभयपाशिकाम् ॥३॥
प्रेतसंस्थां महारौद्रीं भुजगेनोपवीतिनीम् ।
भवानीं कालसंहारबद्धमुद्राविभूषिताम् ॥४॥
जगत्स्थितिकरीं ब्रह्मविष्णुरुद्रादिभिः सुरैः ।
स्तुतां तां परमेशानीं नौम्यहं विघ्नहारिणीम् ॥५॥
ओं नमो भवान्यै ।
कैलासशिखरे रम्ये देवदेवं महेश्वरम् ।
ध्यानोपरतमासीनं प्रसन्नमुखपङ्कजम् ॥६॥
सुरासुरशिरोरत्नरञ्जितांघ्रियुगं प्रभुम् ।
प्रणम्य शिरसा नन्दी बद्धाञ्जलिरभाषत ॥७॥
श्री नन्दिकेश्वर उवाच ।
देवदेव जगन्नाथ संशयोऽस्ति महान्मम ।
रहस्यमेकमिच्छामि प्रष्टुं त्वां भक्तिवत्सल ॥८॥
देवतायास्त्वया कस्याः स्तोत्रमेतद्दिवानिशम् ।

पठ्यतेऽविरतं नाथ! त्वत्तः किमपरः परः ॥९॥
इति पृष्टस्तदा देवो नन्दिकेन जगद्गुरुः।
प्रोवाच भगवानेको विकसन्नेत्रपङ्कजः ॥१०॥
श्रीभगवानुवाच।
साधु साधु गणश्रेष्ठ पृष्टवानसि मां च यत्।
स्कन्दस्यापि च यद्गोप्यं रहस्यं कथयामि तत् ॥११॥
पुरा कल्पक्षये लोकान्सिसृक्षुर्मूढचेतना।
गुणत्रयमयी शक्तिर्मूलप्रकृतिसंज्ञिता ॥१२॥
तस्यामहं समुत्पन्नस्तत्त्वैस्तैर्महदादिभिः।
चेतनेति ततः शक्तिर्मां काप्यालिङ्ग्य तस्थुषी ॥१३॥
तुः सङ्कल्पजालस्य मनोधिष्ठायिनी शुभा।
इच्छेति परमा शक्तिरुन्मिमील ततः परम् ॥१४॥
ततो वागिति विख्याता शक्तिः शब्दमयी परा।
प्रादुरासीज्जगन्माता वेदमाता सरस्वती ॥१५॥
ब्राह्मी च वैष्णवी रौद्री कौमारी पार्वती शिवा।

सिद्धिदा बुद्धिदा शान्ता सर्वमङ्गलदायिनी ॥१६॥
तयैतत्सृज्यते विश्वमनाधारं च धार्यते ।
तयैतत्पाल्यते सर्वं तस्यामेव प्रलीयते ॥१७॥
अर्चिता प्रणता ध्याता सर्वभावविनिश्चिता ।
आराधिता स्तुता सैव सर्वसिद्धिप्रदायिनी ॥१८॥
तस्या अनुग्रहादेव तामेव स्तुतवानहम् ।
सहस्रैर्नामभिर्दिव्यैस्त्रैलोक्यप्राणिपूजितैः ॥१९॥
स्तवेनानेन सन्तुष्टा मामेव प्रविवेश सा ।
तदारभ्य मया प्राप्तमैश्वर्यं पदमुत्तमम् ॥२०॥
तत्प्रभावान्मया सृष्टं जगदेतच्चराचरम् ।
ससुरासुरगन्धर्वं यक्षराक्षसमानवम् ॥२१॥
सपन्नगं ससमुद्रं सशैलवनकाननम् ।
सराशिग्रहनक्षत्रं पञ्चभूतगणान्वितम् ॥२२॥
नन्दिन्नामसहस्रेण स्तवेनानेन सर्वदा ।
स्तुवे परापरां शक्तिं ममानुग्रहकारिणीम् ॥२३॥

इत्युक्त्वोपरतं देवं चराचरगुरुं विभुम् ।
प्रणम्य शिरसा नन्दी प्रोवाच परमेश्वरम् ॥२४॥

श्री नन्दिकेश्वर उवाच ।

भगवन्देवदेवेश लोकनाथ जगत्पते ।
भक्तोस्मि तव दासोस्मि प्रसादः क्रियतां मयि ॥२५॥
देव्याः स्तवमिमं पुण्यं दुर्लभं यत्सुरैरपि ।
श्रोतुमिच्छाम्यहं देव प्रभावमपि चास्य तु ॥२६॥

श्री भगवानुवाच ।

शृणु नन्दिन्महाभाग स्तवराजमिमं शुभम् ।
सहस्रैर्नामभिर्दिव्यैः सिद्धिदं सुखमोक्षदम् ॥२७॥
शुचिभिः प्रातरुत्थाय पठितव्यं समाहितैः ।
त्रिकालं श्रद्धया युक्तैर्नातः परतरः स्तवः ॥२८॥

ॐ अस्य श्री भवानीनामसहस्रस्तवराजस्य, श्री महादेव ऋषिः, अनुष्टुप्छन्दः, आद्या शक्तिः, भगवती भवानी देवता, ह्रीं बीजं, श्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकं आत्मनो वाङ्मनःकायोपार्जितपापनिवारणार्थं ,

श्रीदेवीप्रीत्यर्थं पाठे विनियोगः ॥ अथ करन्यासः ॥ ओं एकवीरायै अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ओं महामायायै तर्जनीभ्यां नमः, ओं पार्वत्यै मध्यमाभ्यां नमः, ओं गिरिशप्रियायै अनामिकाभ्यां नमः, ओं गौर्यै कनिष्ठिकाभ्यां नमः, ओं करालिन्यै करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ अथ षडङ्गन्यासः ॥ ओं एकवीरायै हृदयाय नमः, ओं महामायायै शिरसे स्वाहा, ओं पार्वत्यै शिखायै वषट्, ओं गिरिशप्रियायै कवचाय हुम्, ओं गौर्यै नेत्रत्रयाय वौषट्, ओं करालिन्यै अस्त्राय फट् ॥ प्राणायामः ॥ ध्यानम् ॥

बालार्कमण्डलाभासं
चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम् ।
पाशांकुशशरांश्चापं
धारयन्तीं शिवां भजे ॥ १ ॥

ओं अर्धेन्दुमौलिममलामऽमराभिवन्द्या-
मऽम्भोजपाशसृणिरक्तकपालहस्ताम् ।

रक्ताङ्गरागवसनाभरणां त्रिनेत्रां
ध्याये शिवस्य वनितां मधुविह्वलाङ्गीम् ॥२॥

बीजत्रयाय विद्महे तत्प्रधानाय धीमहि, तन्नः शक्तिः प्रचोदयात् ॥ ३ ॥ मूलम् ।

"ॐश्रींश्रींॐॐह्रींश्रींश्रीं भवानि हुं फट् स्वाहा"

॥ श्री ईश्वर उवाच ॥

ॐ महाविद्या जगन्माता महालक्ष्मीः शिवप्रिया
विष्णुमाया शुभा शान्ता सिद्धा सिद्धसरस्वती ॥
क्षमा कान्तिः प्रभा ज्योत्स्ना पार्वती सर्वमङ्गला ।
हिङ्गुला चण्डिका दान्ता पद्मा लक्ष्मीर्हरिप्रिया ॥
त्रिपुरानन्दिनी नन्दा सुनन्दा सुरवन्दिता ।
यज्ञविद्या महामाया वेदमाता सुधाधृतिः ॥
प्रीतिप्रिया प्रसिद्धा च मृडानी बिन्ध्यवासिनी ।
सिद्धविद्या महाशक्तिः पृथ्वी नारदसेविता ॥

पुरुहूतप्रिया कान्ता कामिनी पद्मलोचना ।
प्रह्लादिनी महामाता दुर्गा दुर्गतिनाशिनी ॥
ज्वालामुखी सुगोत्रा च ज्योतिः कुमुदहासिनी ।
दुर्गमा दुर्लभा विद्या स्वर्गतिः पुरवासिनी ॥
अपर्णा शाम्बरी माया मदिरा मृदुहासिनी ।
कुलवागीश्वरी नित्या नित्यक्लिन्ना कृशोदरी ॥
कामेश्वरी च नीला च भीरुण्डा वह्निवासिनी ।
लम्बोदरी महाकाली विद्याविद्येश्वरी तथा ॥
नरेश्वरी च सत्या च सर्वसौभाग्यवर्धिनी ।
सङ्कर्षणी नारसिंही वैष्णवी च महोदरी ॥
कात्यायनी च चम्पा च सर्वसम्पत्तिकारिणी ।
नारायणी महानिद्रा योगनिद्रा प्रभावती ॥
प्रज्ञापारमिता प्रज्ञा तारा मधुमती मधु ।
क्षीरार्णवसुता हाला कालिका सिंहवाहना ॥
ओंकारा च सुधाहारा चेतना कोपना कृतिः ।
अर्धबिन्दुधरा धीरा विश्वमाता कलावती ॥

पद्मावती सुवस्त्रा च प्रबुद्धा च सरस्वती ।
कुण्डासना जगद्धात्री बुद्धमाता जिनेश्वरी ॥
जिनमाता जिनेन्द्रा च शारदा हंसवाहना ।
राज्यलक्ष्मीर्वषट्कारा सुधाकारासुधात्मिका ॥
राजनीतिस्त्रयीवार्ता दण्डनीतिः क्रियावती ।
सद्भूतिस्तारिणी श्रद्धा सद्गतिः सत्परायणा ॥
सिन्धुर्मन्दाकिनी गङ्गा यमुना च सरस्वती ।
गोदावरी विपाशा च कावेरी च शतह्रदा ॥
सरयूश्चन्द्रभागा च कौशिकी गण्डकी शुचिः ।
नर्मदा कर्मनाशा च चर्मण्वत्यथ देविका ॥
वेत्रवती वितस्ता च वरदा नरवाहना ।
सती पतिव्रता साध्वी सुचक्षुः कुण्डवासिनी ॥
एकचक्षुः सहस्राक्षी सुश्रोणिर्भगमालिनी ।
सेनाश्रेणिः पातका च सुव्यूहा युद्धकांक्षिणी ॥
पताकिनी दयारम्भा विपञ्ची पञ्चमप्रिया ।
परापरकलाकान्ता त्रिशक्तिर्मोक्षदायिनी ॥

ऐन्द्री माहेश्वरी ब्राह्मी कौमारी कुलवासिनी ।
इच्छा भगवती शक्तिः कामधेनुः कृपावती ॥
वज्रायुधा वज्रहस्ता चण्डी चण्डपराक्रमा ।
गौरी सुवर्णवर्णा च स्थितिसंहारकारिणी ॥
एकानेका महेज्या च शतबाहुर्महाभुजा ।
भुजङ्गभूषणा भूषा षट्चक्रक्रमवासिनी ॥
षट्चक्रभेदिनी शूरा कायस्था कायवर्जिता ।
सुस्मिता सुमुखी क्षामा मूलप्रकृतिरीश्वरी ॥
अजा च बहुवर्णा च पुरुषार्थप्रवर्तिनी ।
रक्ता नीला सिता श्यामा कृष्णा पीता च कर्बुरा ।
क्षुधा तृष्णा जरा वृद्धा तरुणी करुणालया ॥
कला काष्ठा मुहूर्ता च निमेषा कालरूपिणी ।
सुवर्णरसनानासा चक्षुःस्पर्शवती रसा ।
गन्धप्रिया सुगन्धा च सुस्पर्शा च मनोगतिः ।
मृगनाभिर्मृगाक्षी च कर्पूरामोदधारिणी ।
पद्मयोनिः सुकेशी च सुलिङ्गा भगरूपिणी ।

योनिमुद्रा महामुद्रा खेचरी खगगामिनी।
मधुश्रीर्माधवीवल्ली मधुमत्ता मदोद्धता॥
मातङ्गी शुकहस्ता च पुष्पबाणेक्षुचापिनी।
रक्ताम्बरधरा क्षीबा रक्तपुष्पावतंसिनी॥
शुभ्राम्बरधरा धीरा माहाश्वेता वसुप्रिया।
सुवेणी पद्महस्ता च मुक्ताहारविभूषणा॥
कर्पूरामोदनिःश्वासा पद्मिनी पद्ममन्दिरा।
खड्गिनी चक्रहस्ता च भुसण्डी परिघायुधा॥
चापिनी पाशहस्ता च त्रिशूलवरधारिणी।
सुबाणा शक्तिहस्ता च मयूरवरवाहना॥
वरायुधधरा वीरा वीरपानमदोत्कटा।
वसुधा वसुधारा च जया शाकम्भरी शिवा॥
विजया च जयन्ती च सुस्तनी शत्रुनाशिनी।
अन्तर्वत्नी वेदशक्तिर्वरदा वरधारिणी॥
शीतला च सुशीला च बालग्रहविनाशिनी।
कौमारी च सुपर्वा च कामाख्या कामवन्दिता॥

जालन्धरधराऽनन्ता कामरूपनिवासिनी ।
कामबीजवती सत्या सत्यधर्मपरायणा ॥
स्थूलमार्गस्थिता सूक्ष्मा सूक्ष्मबुद्धिप्रबोधिनी ।
षट्कोणा च त्रिकोणाचात्रिनेत्रा त्रिपुरसुन्दरी ॥
वृषप्रिया वृषारूढा महिषासुरघातिनी ।
सुम्भदर्पहरा दीप्ता दीप्तपावकसन्निभा ॥
कपालभूषणा काली कपालमालधारिणी ।
कपालकुण्डला दीर्घा शिवदूती घनध्वनिः ॥
सिद्धिदा बुद्धिदा नित्या सत्यमार्गप्रबोधिनी ।
कम्बुग्रीवा वसुमती च्छत्रच्छायाकृतालया ॥
जगद्गर्भा कुण्डलिनी भुजगाकारशायिनी ।
प्रोल्लसत्सप्तपद्मा च नाभिनालमृणालिनी ॥
मूलाधारा निराकारा वह्निकुण्डकृतालया ।
वायुकुण्डसुखासीना निराधारा निराश्रया ।
श्वासोच्छ्वासगतिर्जीवग्राहिणी वह्निसंश्रया ।
वल्लीतन्तुसमुत्थाना षड्रसास्वादलोलुपा ॥

तपस्विनी तपःसिद्धिस्तपसः सिद्धिदायिनी ।
तपोनिष्ठा तपोयुक्ता तापसी च तपःप्रिया ॥
सप्तधातुमयी मूर्तिः सप्तधात्वन्तराश्रया ।
देहपुष्टिर्मनःपुष्टिरन्नपुष्टिर्बलोद्धता ॥
औषधिर्वैद्यमाता च द्रव्यशक्तिः प्रभावती ।
वैद्या वैद्यचिकित्सा च सुपथ्या रोगनाशिनी ॥
मृगया मृगमांसादा मृगत्वङ् मृगलोचना ।
वागुरा बन्धरूपा च वधरूपा वधोद्धता ॥
बन्दी बन्दिस्तुताकारा गारबन्धविमोचिनी ।
शृङ्खला खलहा विद्युद्दृढबन्धविमोचिनी ॥
अंबिकांबालिका चाम्बा स्वच्छा साधुजनार्चिता ।
कौलिकी कुलविद्या च सुकुला कुलपूजिता ॥
कालचक्रभ्रमिभ्रान्ता विभ्रमा भ्रमनाशिनी ।
वात्याली मेघमाला च सुवृष्टिः सस्यवर्धिनी ॥
अकारा च इकारा च उकारैकाररूपिणी ।
ह्रींकारीबीजरूपा च क्लींकाराम्बरवासिनी ॥

सर्वाक्षरमयीमूर्तिरक्षरा वर्णमालिनी ।
सिन्दूरारुणवर्णा च सिन्दूरतिलकप्रिया ॥
वश्या च वश्यबीजा च लोकवश्यविभाविनी ।
नृपवश्या नृपैः सेव्या नृपवश्यकरी प्रिया ॥
महिषी नृपमान्या च नृमान्या नृपनन्दिनी ।
नृपधर्ममयी धन्या धनधान्यविवर्धिनी ॥
चतुर्वर्णमयी मूर्तिश्चतुर्वर्णैश्च पूजिता ।
सर्वधर्ममयी सिद्धिश्चतुराश्रमवासिनी ॥
ब्राह्मणी क्षत्रिया वैश्या शूद्रा चावरवर्णजा ।
वेदमार्गरता यज्ञा वेदिर्विश्वविभाविनी ॥
अस्त्रशस्त्रमयीविद्या वरशस्त्रास्त्रधारिणी ।
सुमेधा सत्यमेधा च भद्रकाल्यऽपराजिता ॥
गायत्री सत्कृतिः सन्ध्या सावित्री त्रिपदाश्रया ।
त्रिसन्ध्या त्रिपदी धात्री सुपर्वा सामगायनी ॥
पाञ्चाली बालिका बाला बालक्रीडा सनातनी ।
गर्भाधारधरा शून्या गर्भाशयनिवासिनी ॥

सुरारिघातिनी कृत्या पूतना च तिलोत्तमा ।
लज्जा रसवती नन्दा भवानी पापनाशिनी ॥
पट्टाम्बरधरा गीतिः सुगीतिर्ज्ञानलोचना ।
सप्तस्वरमयी तन्त्री षड्जमध्यमधैवता ॥
मूर्छना ग्रामसंस्थाना स्वच्छस्वस्थानवासिनी ।
अट्टाट्टहासिनी प्रेता प्रेतासननिवासिनी ॥
गीतनृत्तप्रिया कामा तुष्टिदा पुष्टिदा क्षया ।
निष्ठा सत्यप्रिया प्रज्ञा लोकेशी च सुरोत्तमा ॥
सविषा ज्वालिनीज्वाला विषमोहार्त्तिनाशिनी ।
विषारिर्नागदमनी कुरुकुल्याऽमृतोद्भवा ॥
भूतभीतिहरा रक्षा भूतावेशविनाशिनी ।
रक्षोघ्नी राक्षसीरात्रिर्दीर्घनिद्रा दिवागतिः ॥
चन्द्रिका चन्द्रकान्तिश्च सूर्यकान्तिर्निशाचरी ।
डाकिनी शाकिनी शिष्या हाकिनी चक्रवाकिनी ।
सितासितप्रिया स्वङ्गा सकुला वनदेवता ।
गुरुरूपधरा गुर्वी मृत्युर्मारी विशारदा ॥

महामारी विनिद्रा च तन्द्रा मृत्युविनाशिनी ।
चन्द्रमण्डलसङ्काशा चन्द्रमण्डलवासिनी ॥
अणिमादिगुणोपेता सुस्पृहा कामरूपिणी ।
अष्टसिद्धिप्रदा प्रौढा दुष्टदानवघातिनी ॥ ८० ।
अनादिनिधना पुष्टिश्चतुर्बाहुश्चतुर्मुखी ।
चतुःसमुद्रशयना चतुर्वर्गफलप्रदा ॥
काशपुष्पप्रतीकाशा शरत्कुमुदलोचना ।
भूता भव्या भविष्या च शैलजा शैलवासिनी ॥
वाममार्गरता वामा शिववामाङ्गवासिनी ।
वामाचारप्रिया तुष्टिर्लोपामुद्राप्रबोधिनी ॥
भूतात्मा परमात्मा च भूतभव्यविभाविनी ।
मङ्गला च सुशीला च परमार्थप्रबोधिनी ॥
दक्षिणा दक्षिणामूर्तिः सुदक्षिणा हरिप्रसूः ।
योगिनी योगयुक्ता च योगाङ्गा ध्यानशालिनी ॥
योगपट्टधरा मुक्ता मुक्तानां परमागतिः ।
नारसिंही सुजन्मा च त्रिवर्गफलदायिनी ॥

धर्मदा धनदा चैका कामदा मोक्षदा द्युतिः ।
साक्षिणी क्षणदा दक्षा दक्षजा कोटिरूपिणी ॥
क्रतुः कात्यायनी स्वच्छा स्वच्छन्दा च कविप्रिया ।
सत्यागमा बहिःस्था च काव्यशक्तिः कवित्वदा ॥
मेनापुत्री सतीमाता मैनाकभगिनी तडित् ।
सौदामिनी सुदामा च सुदामा धामशालिनी ॥
सौभाग्यदायिनी द्यौश्च सुभगा द्युतिवर्धिनी ।
श्रीकृत्तिवसना चैव कङ्काली कलिनाशिनी ॥८०।
रक्तबीजवधोद्दृप्ता सुतन्तुर्बीजसन्ततिः ।
जगज्जीवा जगद्बीजा जगत्त्रयहितैषिणी ॥
चामीकररुचिश्चान्द्री साक्षया षोडशीकला ।
यत्तत्पदानुबन्धा च यक्षिणी धनदार्चिता ॥
चित्रिणी चित्रमाया च विचित्रा भुवनेश्वरी ।
चामुण्डा मुण्डहस्ता च चण्डमुण्डवधोद्धुरा ॥
अष्टम्येकादशी पूर्णा नवमी च चतुर्दशी ।
अमा कलशहस्ता च पूर्णकुम्भपयोधरा ॥

अभीरुर्भैरवी भीरुर्भीमा त्रिपुरभैरवी ।
माहाचण्डा च रौद्री च महाभैरवपूजिता ॥
निर्मुण्डा हस्तिनी चण्डा करालदशनानना ।
कराला विकराला च घोरा घुर्घुरनादिनी ॥
रक्तदन्तोर्ध्वकेशी च बन्धूककुसुमारुणा ।
कादम्बरी पटासा च काश्मीरी कुङ्कुमाप्रिया ॥
क्षान्तिर्बहुसुवर्णा च रतिर्बहुसुवर्णदा ।
मातङ्गिनी वरारोहा मत्तमातङ्गगामिनी ॥
हंसा हंसगतिर्हंसी हंसोज्ज्वलशिरोरुहा ।
पूर्णचन्द्रमुखी श्यामा स्मितास्या श्यामकुन्तला ॥
मषी च लेखनी लेखा सुलेखा लेखकप्रिया ।
शङ्खिनी शङ्खहस्ता च जलस्था जलदेवता ॥ ९०
कुरुक्षेत्रावनिः काशी मथुरा काञ्च्यवन्तिका ।
अयोध्या द्वारिकामाया तीर्था तीर्थकराप्रिया ॥
त्रिपुष्कराऽप्रमेया च कोशस्था कोशवासिनी ।
कौशिकी तु कुशावर्ता कोशाम्बी कोशवर्धिनी ॥

कोशदा पद्मकोशाक्षी कुसुम्भकुसुमप्रिया ।
तोतुला च तुलाकोटिः कोटिस्था कोटराश्रया ॥
स्वयम्भूश्च सुगुप्ता च सुरूपा रूपवर्धिनी ।
तेजस्विनी सुभिक्षा च बलदा बलदायिनी ॥
महाकोशी महावर्त्ता बुद्धिः सदसदात्मिका ।
महाग्रहहरा सौम्या विशोका शोकनाशिनी ॥
सात्त्विकी सत्त्वसंस्था च राजसी च रजोवृता ।
तामसी च तमोयुक्ता गुणत्रयविभाविनी ॥
अव्यक्ता व्यक्तरूपा च वेदविद्या च शाम्भवी ।
शम्भुकल्याणिनी कल्पा मनःसङ्कल्पसन्ततिः ॥
सर्वलोकमयी शक्तिः सर्वश्रवणगोचरा ।
सर्वज्ञानवती वाञ्छा सर्वतत्त्वावबोधिनी ॥
जाग्रती च सुषुप्तिश्च स्वप्नावस्था तुरीयका ।
त्वरा मन्दगतिर्मन्दा मदिरामोदधारिणी ॥
पानभूमिः पानपात्रा पानदानकरोद्यता ।
आघूर्णारुणनेत्रा च किञ्चिदऽव्यक्तभाषिणी ॥ १०० ॥

आशापूरा च दीक्षा च दक्षा दीक्षितपूजिता ।
नागवल्ली नागकन्या भोगिनी भोगवल्लभा ॥
सर्वशास्त्रवती विद्या सुस्मृतिर्धर्मवादिनी ।
श्रुतिः स्मृतिधरा ज्येष्ठा श्रेष्ठा पातालवासिनी ॥
मीमांसा तर्कविद्या च सुभक्तिर्भक्तवत्सला ।
सुनाभिर्यातना जातिर्गम्भीराऽभाववर्जिता ।
नागपाशधरा मूर्तिरऽगाधा नागकुण्डला ।
सुचक्रा चक्रमध्यस्था चक्रकोणनिवासिनी ॥
सर्वमन्त्रमयी विद्या सर्वमन्त्राक्षरावलिः ।
मधुस्रवा स्रवन्ती च भ्रामरी भ्रमरालका ॥
मातृमण्डलमध्यस्था मातृमण्डलवासिनी ।
कुमारजननी क्रूरा सुमुखी ज्वरनाशिनी ॥
अतीता विद्यमाना च भाविनी प्रीतिमञ्जरी ।
सर्वसौख्यवती युक्तिराऽऽहारपरिणामिणी ॥
निधानं पञ्चभूतानां भवसागरतारिणी ।
अक्रूरा च ग्रहवती विग्रहा ग्रहवर्जिता ॥

रोहिणी भूमिगर्भा च कालभूः कालवर्तिनी ।
कलङ्करहिता नारी चतुष्षष्ट्यभिधावती ॥
जीर्णा च जीर्णवस्त्रा च नूतना नववल्लभा ।
अजरा च रतिः प्रीतिरऽतिरागविवर्धिनी ॥
पञ्चवातगतेर्भिन्ना पञ्चश्लेष्माशयाधरा ।
पञ्चपित्तवती पङ्क्तिः पञ्चस्थानविभाविनी ॥
ऋतुमती कामवती बहिःप्रस्नाविणी त्र्यहा ।
रजःशुक्रधरा शक्तिर्जरायुर्गर्भधारिणी ॥
त्रिकालज्ञा त्रिलिङ्गा च त्रिमूर्तिः पुरवासिनी ।
अरागा शिवतत्त्वा च कामतत्त्वानुरागिणी ॥
प्राच्यवाची प्रतीचीदिगुदीचीदिग्विदिग्दिशा ।
अहंकृतिरऽहंकारा बालिमाया बलिप्रिया ॥
स्रुक्स्रुवा सामिधेनी च सुश्रद्धा श्राद्धदेवता ।
माता मातामही तृप्तिः पितृमाता पितामही ॥
स्नुषा दौहित्रिणी पुत्री पौत्री नप्त्री शिशुप्रिया ।
स्तनदा स्तनधारा च विश्वयोनिः स्तनन्धयी ॥

शिशूत्सङ्गधरा दोला दोलाक्रीडाभिनन्दिनी ।
उर्वशी कदली केका विशिखा शिखिनर्तिनी ॥
खट्वाङ्गधारिणी खट्वा बाणपुङ्खानुवर्तिनी ।
लक्ष्यप्राप्तिकराऽलक्ष्या लक्ष्या च शुभलक्षणा ॥
वर्तिनी सुपथाचारा परिखा च खनिर्वृतिः ।
प्राकारवलया वेला मर्यादा च महोदधौ ॥
पोषणी शोषणीशक्तिर्दीर्घकेशी सुलोमशा ।
ललिता मांसला तन्वी वेदवेदाङ्गधारिणी ॥
नरासृक्पानमत्ता च नरमुण्डास्थिभूषणा ।
अक्षक्रीडारतिः शारी शारिका शुकभाषिणी ॥
शाम्बरी गारुडीविद्या वारुणी वरुणार्चिता ।
वाराही तुण्डहस्ता च दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धरा ॥
मीनमूर्तिधरा मूर्त्ता वदान्या प्रतिमाश्रया ।
अष्टमूर्तिर्निधीशा च सालिग्रामशिला शुचिः ॥
स्मृतिः संस्काररूपा च सुसंस्कारा च संस्कृतिः ।
प्राकृता देशभाषा च गथा गीतिः प्रहेलिका ॥

इडा च पिङ्गला पिङ्गा सुषुम्णा सूर्यवाहिनी ।
शशिस्रवा च तालुस्था काकिनी मृतजीविनी ॥
अनुरूपा बृहद्रूपा लघुरूपा गुरुस्थिरा ।
स्थावरा जङ्गमादेवी कृतकर्मफलप्रदा ॥
विषयाक्रान्तदेहा च निर्विशेषा जितेन्द्रिया ।
विश्वरूपा चिदानन्दा परंब्रह्मप्रबोधिनी ॥
निर्विकारा च निर्वैरा विरतिः सत्त्ववर्धिनी ।
पुरुषाज्ञानभिन्ना च क्षान्तिः कैवल्यदायिनी ॥
विविक्तसेविनी प्रज्ञा जनयित्री बहुश्रुतिः ।
निरीहा च समस्तेहा सर्वलोकैकसेविता ॥
सेवा सेवाप्रिया सेव्या सेवाफलविवर्धिनी ।
कलौकल्किप्रिया काली दुष्टम्लेच्छविनाशिनी ॥१३०॥
प्रत्यञ्चा च धनुर्यष्टिः खड्गधारा दुरानतिः ।
अश्वप्लुतिश्च वल्गा च सृणिः सन्मत्तवारणा ॥
वीरभूर्वीरमाता च वीरसूर्वीरनन्दिनी ।
जयश्रीर्जयदीक्षा च जयदा जयवर्धिनी ॥

सौभाग्यसुभगाकारा सर्वसौभाग्यवर्धिनी ।
क्षेमङ्करी सिद्धिरूपा सत्कीर्तिः पथिदेवता ॥
सर्वतीर्थमयीमूर्तिः सर्वदेवमयीप्रभा ।
सर्वसिद्धिप्रदाशक्तिः सर्वमङ्गलमङ्गला ॥१०००॥

पुण्यं सहस्रनामेदमऽम्बाया रुद्रभाषितम् । चतुर्वर्गप्रदं सत्यं नन्दिकेन प्रकाशितम् ॥ नातः परतरो मन्त्रो नातः परतरः स्तवः । नातः परतरा विद्या तीर्थं नातः परात्परम् ॥ ते धन्याः कृतपुण्यास्ते त एव भुवि पूजिताः । एकभावं मुदा नित्यं येर्चयन्ति महेश्वरीम् ॥ देवतानां देवता या ब्रह्माद्यैर्या च पूजिता । भूयात्सा वरदा लोके साधूनां विश्वमङ्गला एतामेव पुराराध्य विद्यां त्रिपुरभैरवीम् । त्रैलोक्यमोहनं रूपमकार्षीद्भगवान्हरिः ॥

इति श्रीरुद्रयामले तन्त्रे नन्दिकेश्वरसंवादे महाप्रभा भवानीनामसहस्रस्तवराजः समाप्तः ॥

——॰——॰——

सहस्रनेत्रां सूर्याभां नानालङ्कारभूषिताम् ।
प्रसन्नवदनां नित्यमप्सरोगणसेविताम् ॥
श्रीदुर्गां सौम्यवदनां पाशाङ्कुशधरां पराम् ।
त्रैलोक्यमोहिनीं देवीं भवानीं प्रणमाम्यहम् ॥

इन्द्र उवाच ॥

इन्द्राक्षी नाम सा देवी देवता समुदाहृता ।
गौरी शाकम्भरी देवी दुर्गानाम्नेति विश्रुता ॥
कात्यायनी महादेवी चण्डघण्टा महातपा ।
सावित्री सा च गायत्री ब्रह्माणी ब्रह्मवादिनी ॥
[illegible]यणी भद्रकाली रुद्राणी कृष्णपिङ्गला ।
अग्निज्वाला रौद्रमुखी कालरात्रिस्तपस्विनी ॥
मेघश्यामा सहस्राक्षी विष्णुमाया जलोदरी ।
महोदरी मुक्तकेशी घोररूपा महाबला ॥
आनन्दा भद्रजानन्दा रोगहर्त्री शिवप्रिया ।
शिवदूती कराली च प्रत्यक्षपरमे[illegible]
[illegible]न्द्ररूपा च इन्द्र[illegible]

महिषासुरसंहर्त्री चामुण्डा गर्भदेवता ॥
वाराही नारसिंही च भीमा भैरवनादिनी ।
श्रुतिः स्मृतिर्धृतिर्मेधा विद्या लक्ष्मीः सरस्वती ॥
अनन्ता विजया पूर्णा मनस्तोषाऽपराजिता ।
भवानी पार्वती दुर्गा हैमवत्यम्बिका शिवा ॥
शिवा भवानी रुद्राणी शङ्करार्धशरीरिणी ॥
एतैर्नामपदैर्दिव्यैः स्तुता शक्रेण धीमता ।
आयुरारोग्यमैश्वर्याऽक्षयसम्पत्तिकारकम् ॥
क्षयापस्मारकुष्ठादितापज्वरनिवारकम् ।
शतमावर्तयेद्यस्तु मुच्यते व्याधिबन्धनात् ॥
वर्तयेत्सहस्रेण लभते वाञ्छितं फलम् ।
राजा वश्यमवाप्नोति सत्यमेव न संशयः ।
कं जपेद्यस्तु साक्षाद्देवीं स पश्यति ।
...त्यं धनधान्यविवर्धन...

चन्द्रापीडानन्दितमन्दस्मितवक्त्रां ।
चन्द्रापीडालङ्कृतलोलालकभाजाम ।
इन्द्रोपेन्द्राद्यर्चितपादाम्बुजयुग्मां गौरीमऽम्बा ॥
प्रत्याहारध्यानसमाधिस्थितिभाजां ।
नित्यं चित्ते निर्वृत्तिकाष्ठां कलयन्तीम ।
सत्यज्ञानानन्दमयीं त्वां तनुमध्यां गौरीमऽम्बा० ॥
आदिक्षान्तमऽक्षरमूर्त्या विलसन्तीं ।
भूते भूते भूतकदम्बप्रसवित्रीं ।
शब्दब्रह्मानन्दमयीं त्वां तनुमध्यां गौरी
नानाकारैः शक्तिकदम्बैर्भुवनानि ।
व्याप्य स्वैरं क्रीडति यासौ स
त्यार्णीं त्वां कल्पलतामाऽऽनति
...तप्रोतमशेषं मणिमाल

ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे

चतुर्भुजां चन्द्र कलार्ध शेखरां सिंहासनस्थां
भुजगोपवीतिनीम्। पाशांकुशाभय हस्त खड्ग धारिणीं
राज्ञी भजे चेतसि राज्य दायिनीम्
ॐ ह्रीं श्रीं रं क्लीं हौं भगवत्यै राज्ञै ह्रीं स्वाहा

[illegible] लाल रैणा

ॐ नमः शिवाय

ब्रह्मादि कारणातीतं, स्वशक्त्यानन्द निर्भरम्, ~~नमामि~~ नमामि
परमेशानं, स्वच्छन्दं वीर नायकम्। कैलास शिखरासीनं
देव देवं जगद्गुरुं, प्रपच्छ प्रणता देवी, भैरवं विनता भय:
श्री देवी-उवाच, प्रायश्चित्तेषु सर्वेषु, समयोल्लंघनेषु च
महा भयेषु घोरेषु, तीव्रोपद्रव भूमिषु, छिद्र स्थाने
सर्वेषु, सदुपायं वद प्रभो, येनायासेन सहितो, निर्दोष:
भवेन्नर:। श्री भैरवोवाच॥ शृणु देवि परं गुह्यं।
रहस्यं परमाद्भुतं, सर्व पाप प्रशमनं, सर्व दुर्गति नाशनम्
प्रायश्चित्तेषु सर्वेषु, तीव्रोत्पात विमोचनम्
सर्व छिद्राप हरणं, सर्वार्थ विनिवारणम्, समयो
ल्लङ्घने घोरे, जपादेव विमोचनम्, भोग मोक्ष प्रदं
सर्व सिद्धि फलावहम्। सकृत जाप्येन शुध्यन्ति, महा
पातकिनोपि ये, तदर्धं पातकं हन्ति, तत्पादे दोष पात
कायिकं वाचिकं चैव, मानसं स्पर्श दोषजम्। प्रा
दिक्षया वापि, सकृत् जाप्येन शुध्यति, यागारम्भे च
न्ते पठितव्यं प्रयत्नत:। नित्ये नैमित्तिके काम्ये,
परस्या व्यात्मने शिव: निष्कृद् करणं प्रोक्तं, सा
मारि पूरकं, द्रव्यहीने मंत्र हीने, ज्ञान योग विव:
भक्ति श्रद्धा विरहिते, शुद्ध शून्ये विशेषत:। मने
प दोषे तु, विलोम मम्न वेष्टने, विधिहीने प्रमादे च,
सर्व कर्मसु। नात: परतरो मंत्रो, नात: परतर: स्त
नात: परतर: क्वचित्, संप्रक प्राप्ति रा विधे। परमाप्यायनं
सर्वं समय विद्यानां, राज राजेश्वरी। सर्व
भैरवस्य प्रकीर्तितम्। प्रीणनं सर्व देवानां।

सौभाग्य वर्धनं स्तवराज मिमं ध्ययं शृणवल्या दहिना
ऽपिये॥ अस्य श्री बहुरूप गर्भ मंत्रस्य, वाम देव-
ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्री परमेश्वर सकल
भट्टारको देवता। आत्मनो वाङ्मनः कायो, पार्जित
पाप निवारणार्थं, मनो कामना सिद्ध्यर्थं, पाठे
विनियोगः ॥ध्यानं॥ वामे खेटक पाश कार्मु
किल हस्त, दण्डं च वीणाङ्के, बिभ्राणं ध्वज चन्द्र सौ
ख्य निभरे, शङ्कं कुठारं करे, दक्षे खड्ग तुकुशा कन्दलेषु
डमरू, वज्र त्रिशूल मयं, रुद्र स्यं प्रार वक्त्र मिन्दु
धवलं, स्वच्छन्द नाथ स्तुमः॥ बहुरूपाय विद्महे,
महारुद्राय धीमहि। तन्नो अघोरः प्रचोदयात् ३
अघोरेभ्यो थ घोरेभ्यो घोर घोर तरेभ्यश्च
र्तिः सर्व सर्वेभ्यो नमस्ते रुद्र रूपेभ्यः १०८
पञ्च नयनं देवं, जटा मुकुट मंडितं, चन्द्र कोटि प्रतीकाशं,
जर्ध कृत शेखरं, पंच वक्त्रं विशालाक्षं, सर्प गोणा समन्वितम्,
वृद्धेः आभूषणैः शोभितं तु विराजितं, कपाल माला भरणं,
खेटक धारिणं, पाशांकुश धरं देवं, प्रार हस्तं पिनाकिनम्,
अभय हस्तं च, खड्ग खट्वांग धारिणं, वीणा डमरू हस्तं च, घंटा हस्तं
त्रिलिनं, वज्र दंड कृताटोप, परशु हस्तकं। चन्द्रेण विविध
जीन तु विराजितं, सिंह चर्म परीधानं, गज चर्मोत्तरीयकम्। अष्टा
भुजं देवं। नील [illegible] तेजसम्। ऊर्ध्व वक्त्रं महेशानि। स्फटिक काभं
विचिन्तयेत् [illegible] पूर्व वक्त्रं तु। नीलोत्पल दल प्रभं। दक्षिणं
[illegible]यात्। वामं चैव विचिन्तयेत्। दाडिमे कुसुमं प्रख्यं।

युक्ते प्रदातव्यं न देयं परदीक्षिते ॥ पशूनां सन्निधौ देवि नोच्चार्यं सर्वथा क्वचित् । अस्यैव स्मृतमात्रस्य विघ्ना नश्यन्ति सर्वशः ॥ गुह्यका यातुधानाश्च वेताला राक्षसादयः । डाकिन्यश्च पिशाचाश्च क्रूरसत्त्वाश्च पूतनाः ॥ नश्यन्ति सर्वे पठितस्तोत्रस्यास्य प्रभावतः । खेचरी भूचरी चैव डाकिनी शाकिनी तथा ॥ ये चान्ये बहुधा भूता दुष्टसत्त्वा भयानकाः । व्याधिदौर्भिक्षदौर्भाग्यमारीमोहविषादयः ॥ गजव्याघ्रादयो भीताः पलायन्ते दिशो दश । सर्वे दुष्टाः प्रणश्यन्ति चेत्याज्ञा पारमेश्वरी ॥ इति श्रीललितस्वच्छन्दे बहुरूपगर्भस्तोत्रराजः सम्पूर्णः ॥

अथ साम्बसदाशिवकवचस्तोत्रम् ॥

अस्य श्रीसाम्बसदाशिवकवचराजस्य, ऋषभयोगीश्वर ऋषिः, अनुष्टुप्छन्दः श्रीसाम्बसदाशिवो देवता, ॐ बीजं, नमः शक्तिः, शिवायेति कीलकं, श्रीसाम्बसदाशिवप्रीत्यर्थे पाठे विनियोगः ॥ ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, न तर्जनीभ्यां नमः, मः मध्यमाभ्यां नमः, शि अनामिकाभ्यां नमः. वा कनिष्ठकाभ्यां नमः, य करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ हृदयाय नमः, न शिरसे स्वाहा, मः शिखायै वषट्, शि कवचाय हुँ, वा नेत्राभ्यां वौषट्, य अस्त्राय फट् । प्राणायामः ॥ ध्यानं । ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् । पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिने-

त्रम् ॥ "तत्पुरुषाय विद्महे, महादेवाय धीमहि, तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्" ॥ ३ ॥ ऋषभ उवाच ॥ नमस्कृत्य महादेवं विश्वव्यापिनमीश्वरम् । वक्ष्ये शिवमयं वर्म सर्वरक्षाकरं नृणाम् ॥ १ ॥ शुचौ देशे समासीनो यथावत्कल्पितासनः । जितेन्द्रियो जितप्राणश्चिन्तयेच्छिवमव्ययम् ॥ २ ॥ हृत्पुण्डरीकान्तरसन्निविष्टं स्वतेजसा व्याप्तनभोवकाशम् । अतीन्द्रियं सूक्ष्ममनन्तमाद्यं ध्यायेत्परानन्दमयं महेशम् ॥ ३ ॥ ध्यानावधूताखिलकर्मबन्धश्चिरं चिदानन्दनिमग्नचेताः । षडक्षरन्याससमाहितात्मा शैवेन कुर्यात्कवचेन रक्षाम् ॥ ४ ॥ मां पातु देवोऽखिलदेवतात्मा संसारकूपे पतितं गभीरे । यन्नाम दिव्यं वरमन्त्रमूलं धुनोतु मे सर्वमघं हृदिस्थम् ॥ ५ ॥ सर्वत्र मां रक्षतु विश्वमूर्तिर्ज्योतिर्मयानन्दघनश्चिदात्मा । अणोरणीयानुरुशक्तिरेकः स ईश्वरः पातु भयादशेषात् ॥ ६ ॥ यो भूस्वरूपेण बिभर्ति विश्वं पायात्स भूमेर्गिरिशोऽष्टमूर्तिः । योऽपां स्वरूपेण नृणां करोति सञ्जीवनं सोऽवतु मां जलेभ्यः ॥ ७ ॥ कल्पावसाने भुवनानि दग्ध्वा सर्वाणि यो नृत्यति भूरिलीलः । स कालरुद्रोऽवतु मां दवाग्नेर्वात्यादिभीतेर्निखिलाच्च तापात् ॥ ८ ॥ यो वायुरूपेण चलत्त्वमाप प्राणादिभिः सोऽवतु मां दृढाय । सव्योमरूपो निखिलावकाशो ह्याकाशरूपेण करोतु रक्षाम् ॥ ९ ॥ यः कालकृत्कालभयाच्च सोऽव्यात् दिवाकरत्वे जगत्त्रये माम् । निशाकरत्वेन वनस्पतीशो यो वा मनः सोऽवतु निश्चलाय ॥ १० ॥ यो वेद नाम व्यवहारभोक्ता जीवस्वरूपेण हृषीकसाक्षी । स पातु सत्कर्मफलप्रदो मां मखाध्यक्ष

सकयज्वमूर्तिः ॥ ११ ॥ प्रदीप्तविद्युत्कनकावभासो विद्यावराभीतिकुठारपाणिः । चतुर्मुखस्तत्पुरुषस्त्रिनेत्रः प्राच्यां स्थितं रक्षतु मामजस्रम् ॥ १२ ॥ कुठारवेदाङ्कुशपाशशूलकपालढक्काक्षगुणान्ददानः । चतुर्मुखो नीलरुचिस्त्रिनेत्रः पायादऽघोरो दिशि दक्षिणस्याम् ॥ १३ ॥ कुन्देन्दुशङ्खस्फटिकावभासो वेदाक्षमालावरदाभयाङ्कः । त्र्यक्षश्चतुर्वक्त्र उरुप्रभावः सद्योधिजातोऽवतु मां प्रतीच्याम् ॥ १४ ॥ वराक्षमालाभयढक्कहस्तः सरोजकिञ्जल्कसमानवर्णः । त्रिलोचनश्चारुचतुर्मुखो मां पायादुदीच्यां दिशि वामदेवः ॥ १५ ॥ वेदाभयेष्टाङ्कुशपाशटङ्ककपालढक्काक्षत्रिशूलपाणिः । सितद्युतिः पञ्चमुखोऽवतान्मामीशान ऊर्ध्वं परमप्रकाशः ॥ १६ ॥ मूर्धानमव्यान्मम चन्द्रमौलिर्भालं ममाव्यादऽथ भालनेत्रः । नेत्रे ममाव्याद्भगनेत्रहारी नासां सदा रक्षतु विश्वनाथः ॥ १७ ॥ पायाच्छ्रुती मे श्रुतिगीतकीर्तिः कपोलमव्यात्सततं कपाली । वक्त्रं सदा रक्षतु पञ्चवक्त्रो जिह्वां सदा रक्षतु वेदजिह्वः ॥ १८ ॥ कण्ठं गिरीशोऽवतु नीलकण्ठः स्कन्दौ वृषस्कन्दगतः सदाव्यात् । स्तनद्वयं पातु सदा महेशः पार्श्वद्वयं मे भगवान्गिरीशः ॥ १९ ॥ भुजद्वयं पातु भुजङ्गधारी पाणिद्वयं पातु पिनाकपाणिः । दोर्मूलमव्यान्मम धर्मबाहुर्वक्षःस्थलं दक्षमखान्तकोऽव्यात् ॥ २० ॥ ममोदरं पातु गिरीन्द्रधन्वा मध्यं ममाव्यान्मदनान्तकारी । हेरम्बतातो मम पातु नाभिं पायात्कटिं धूर्जटिरीश्वरो मे ॥ २१ ॥ गुह्यं हरो रक्षतु वासुकीशः पृष्ठं ममाव्याद्गनापगेशः । ऊरुद्वयं पातु कुबेरमित्रो जानुद्वये मे जगदीश्वरोऽव्यात् ॥ २२ ॥ जङ्घाद्वयं

पुङ्गवकेतुरव्यात्पादौ ममाव्यात्सुरवन्द्यपादः। पायान्ममान्तःकरणं परात्मा सर्वाङ्गमव्यान्मम सर्वगुप्तः ॥ २३ ॥ महेश्वरः पातु दिनाद्ययामे मां मध्ययामेऽवतु वामदेवः। त्रिलोचनः पातु तृतीययामे वृषध्वजः पातु दिनान्तयामे ॥ २४ ॥ पायान्निशादौ शशिशेखरो मां गङ्गाधरो रक्षतु मां निशीथे। गौरीपतिः पातु निशावसाने मृत्युञ्जयो रक्षतु सर्वकालम् ॥ २५ ॥ अन्तःस्थितं रक्षतु शंकरो मां स्थाणुः सदा पातु बहिःस्थितं माम्। तदन्तरे पातु पतिः पशूनां सदाशिवो रक्षतु मां समन्तात् ॥ २६ ॥ तिष्ठन्तमव्याद्भुवनैकनाथः पायाद्व्रजन्तं प्रमथाधिनाथः। वेदान्तवेद्योऽवतु मां निषण्णं मामव्ययः पातु शिवः शयानम् ॥ २७ ॥ मार्गेषु मां रक्षतु नीलकण्ठः शैलादिदुर्गेषु पुरत्रयारिः। अरण्यवासादिमहाप्रवासे पायान्मृगव्याध उदारशक्तिः ॥ २८ ॥ कल्पान्तकालोग्रपटुप्रकोपस्फुटाट्टहासोच्चलिताण्डकोशः। घोरारिसेनार्णवदुर्निवारमहाभयाद्रक्षतु वीरभद्रः ॥ २९ ॥ पत्त्यश्वमातङ्गरथावरूथवत्सहस्रलक्षायुतकोटिभीषणम्। अक्षौहिणीनां शतमाततायिनां छिन्द्यान्मृडो घोरकुठारधारया ॥ ३० ॥ निहन्तु दस्यून्प्रलयानलार्चिर्ज्वलत्त्रिशूलं त्रिपुरान्तकस्य। शार्दूलसिंहर्क्षवृकादिहिंस्रान्सन्त्रासयत्वीशधनुः पिनाकः ॥ ३१ ॥ दुःस्वप्नदुःशकुनदुर्गमदौर्मनस्यदुर्भिक्षदुर्व्यसनदुःसहदुर्यशांसि। उत्पातशापविषभीतिमसद्ग्रहार्तिं व्याधींश्च नाशयतु मे जगतामधीशः ॥ ३२ ॥ ॐ नमो भगवते सदाशिवाय सकलतत्त्वात्मकाय सर्वयन्त्राधिष्ठिताय सर्वतन्त्रस्वरूपाय सर्वमन्त्रस्वरूपाय सर्वतत्त्वविदुराय ब्रह्मरुद्रावतारिणे नीलकण्ठाय पार्व-

मनोहरप्रियाय सोमसूर्याग्निलोचनाय भस्मोद्धूलितविग्रहाय
हामुकुटधारिणे माणिक्यभूषणाय सृष्टिस्थितिप्रलयकालाग्नि-
द्रावताराय दक्षाध्वरध्वंसकाय महाकालभेदनाय मूलाधारैक-
लयाय तत्त्वातीताय गङ्गाधराय सर्वदेवाधिदेवाय षडाश्रयाय
दान्तसाराय त्रिवर्गसाधनाय अनेककोटिब्रह्माण्डजनकाय अन-
तवासुकितक्षककार्कोटकशङ्खपालकुलिकपद्ममहापद्मेत्यष्टनागकु-
भूषणाय प्रणवस्वरूपाय चिदाकाशाय आकाशदिक्स्वरूपाय
कलग्रहनक्षत्रमालिने सकलाय सकलकलङ्करहिताय सकललो-
ककर्त्रे सकललोकैकभर्त्रे सकललोकैकगुरवे सकललोकैकसा-
क्षिणे सकललोकैकवरप्रदाय सकलनिगमगुह्याय सकलवेदान्त-
पारगाय सकलदुरितार्तिभञ्जनाय सकलजगदभयङ्कराय सकल-
लोकैकशङ्कराय शशाङ्कशेखराय शाश्वतनिजावासाय निर्गुणाय
नीरूपाय निराभासाय निरामयाय निरातंकाय निष्प्रपञ्चाय
निष्कलङ्काय निर्द्वन्द्वाय निःसङ्गाय निर्मलाय निर्गमाय निरु-
पभिभवाय निर्भयाय निर्लोभाय निष्क्रोधाय निश्चिन्ताय
निरहंकाराय निराकुलाय निराधाराय नित्यशुद्धबुद्धपरिपूर्ण-
सच्चिदानन्दाय परमशान्तप्रकाशतेजोरूपाय तेजोमयाय जय
जय रुद्र महारुद्रवीरभद्रावतार महाभैरव कालभैरव कल्पान्त-
भैरव कपालमालाधर खट्वाङ्गखड्गचर्मपाशांकुशडमरुकशूल-
चापबाणगदाशक्तिभिण्डिपालतोमरमुसलमुद्गरप्रासपट्टिशपाश-
परशुपरिघभुसण्डीशतघ्नीचक्राद्यायुधभीषणकर सहस्रमुख दंष्ट्रा-
कराल विकटाट्टहासविस्फारितब्रह्माण्डमण्डल नागेन्द्रकुण्डल
नागेन्द्रहारवलय नागेन्द्रचर्माम्बरधर मृत्युञ्जय त्र्यंबकत्रिपुरा-

न्तक विरूपाक्ष विश्वेश्वर विश्वरूप वृषभवाहन विषभीपण विश्वतोमुख सर्वतो मां रक्ष रक्ष ज्वल ज्वल प्रज्वल २ महामृत्युभयं नाशय २ विषसर्पभयं शमय २ रोगभयमुत्सादय २ चोरभयं नाशय २ चोरान्मारय २ ममशत्रून् उच्चाटय २ त्रिशूलेन विदारय २ कुठारेण भिन्धि २ खड्गेन छिन्धि २ खट्वाङ्गेन विपोथय २ मुसुलेन निष्पेषय २ बाणैः सन्ताडय २ तृतीयनेत्रेण सन्तापय २ रक्षांसि भीषय २ भूतान् विद्रावय २ कूष्माण्डवेतालभूतमारीब्रह्मराक्षसगणान् सन्त्रासय २ ममाऽभयं कुरु २ वित्रस्तं मामाश्वासय २ नरकमहाभयान्मामुद्धर २ संजीवय २ क्षुत्तृड्भ्यां मामाप्यायय २ दुःखातुरं मामानन्दय २ शिवकवचेन मामाच्छादय २ त्र्यम्बक सदाशिव नमस्ते नमस्ते नमस्ते ॥ ऋषभ उवाच । इतीदं कवचं शैवं वरदं व्याहृतं मया । सर्वबाधाप्रशमनं रहस्यं सर्वदेहिनाम् ॥१॥ यः सदा धारयेन्मर्त्यः शैवं कवचमुत्तमम् । न तस्य जायते क्वापि भयं शम्भोरनुग्रहात् ॥ २ ॥ क्षीणायुः प्राप्तमृत्युर्वा महारोगहतोऽपि वा । सद्यः सुखमवाप्नोति दीर्घमायुश्च विन्दति ॥ ३ ॥ सर्वदारिद्र्यशमनं सर्वमङ्गल्यवर्धनम् । यो धत्ते कवचं शैवं स देवैरपि पूज्यते ॥ ४ ॥ महापातकसंघातैर्मुच्यते चोपपातकैः । देहान्ते मुक्तिमाप्नोति शिववर्मानुभावतः ॥ ५ ॥ त्वमपि श्रद्धया वत्स शैवं कवचमुत्तमम् । धारयस्व मया धत्तं सद्यः श्रेयो ह्यवाप्स्यसि ॥ ६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे शिवकवचं सम्पूर्णम् ॥

अथाऽनुलेपार्थं शिवमहिमस्तोत्रम् ॥

क्षेपकः ॥ "आधीनामगदं दिव्यं व्याधीनां मूलकृन्तनम् । उपद्रवानां दलनं महादेवमुपास्महे ॥ १ ॥ अहं पापी पापक्षपणनिपुणः शङ्कर ! भवानऽहं भीतो भीताऽभयवितरणे ते व्यसनिता । अहं दीनो दीनोद्धरणविधिसज्ञस्त्वमितरन्न जानेऽहं वक्तुं कुरु सकलशोच्ये मयि कृपाम् ॥ २ ॥ जनास्त्वत्पादाब्जश्रवणमननध्याननिपुणाः स्वयं ते निस्तीर्णा न खलु करुणा तेषु करणा । भवे लीने दीने मयि मननहीने न करुणा कथं नाथ ख्यातस्त्वमसि करुणासागर इति ॥ ३ ॥"

ॐ महिम्नः पारं ते परमऽविदुषो यद्यऽसदृशी स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः । अथाऽवाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः ॥ १ ॥ अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयोरतद्व्यावृत्त्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि । स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः प... ...वीने पतति न मनः कस्य न वचः ॥२॥ ...मधुस्फीता व... ...परमविधियः ...तव ब्रह्मन् किं वागऽपि ...कमलेर्विस्मय... ...ं स्यात्तवत... ...पुण्येन भवतः ...गतो ... ...लिखतिर्णीं गुणकथ... ॥ ४ ॥ तवैश्वर्यं ...शि ! पर्यवसिता ... गुणभिन्नासु ...तत्पठति परमभक्त्या ... ...के रुद्रतुल्यस्तथात्र प्रचुरतरधनायु·

त्राम्णो वरद ! परमोच्चैरपि सतीमधश्चक्रे बाणः परिजन-
विधेयत्रिभुवनः । न तच्चित्रं तस्मिन्वरिवसितरि त्वच्चरणयोर्न
कस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः ॥ १३ ॥ अकाण्ड-
ब्रह्माण्डक्षयचकितदेवासुरकृपाविधेयस्यासीद्यस्त्रिनयन ! विषं
संहृतवतः । स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते न श्रियमहो
विकारोपि श्लाघ्यो भुवनभयभङ्गव्यसनिनः ॥ १४ ॥ असिद्धार्था
नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनो
यस्य विशिखाः । स पश्यन्नीश त्वामितरसुरसाधारणमभूत्स्मरः
स्मर्तव्यात्मा नहि वशिषु पथ्यः परिभवः ॥ १५ ॥ मही पादा-
घाताद्व्रजति सहसा संशयपदं पदं विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्ण-
ग्रहगणम् । मुहुर्द्यौर्दौःस्थ्यं यात्यऽनिभृतजटाताडिततटा जगद्र-
क्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता ॥ १६ ॥ वियद्व्यापी
तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः प्रवाहो वारां यः पृषतलघु दृष्टः
शिरसि ते । जगद्द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमित्यनेनैवो-
न्नेयं धृतमहिम ! दिव्यं तव वपुः ॥ १७ ॥ रथः क्षोणी यन्ता
शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो रथाङ्गे चन्द्रार्कौ रथचरणपाणिः शर
[illegible] न्दुमौले [illegible] सेयं त्रिपुरतृणमाडम्बरविधिर्विधेयैः क्रीड-
[illegible] प्रभधियः ॥ १८ ॥ हरिस्ते साहस्रं

[illegible] स्यात्कज्जलं सिन्धुपात्रे सुरतरुवर
[illegible] लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्व
[illegible] ईश ! पारं न याति ॥ ३५ ॥ अह-
[illegible] तत्पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पु-
[illegible] के रुद्रतुल्यस्तथात्र प्रचुरतरधनायुः

करः कर्मसु जनः ॥ २० ॥ क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीश-
स्तनुभृतामृषीणामार्त्विज्यं शरणद! सदस्याः सुरगणाः । क्रतु-
भ्रंशस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो ध्रुवं कर्तुः श्रद्धाविधुरम-
भिचाराय हि मखाः ॥ २१ ॥ प्रजानाथं नाथ प्रसभमभिकं
स्वां दुहितरं गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषुमृष्यस्य वपुषा । धनु-
ष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्राकृतममुं त्रसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न
मृगव्याधरभसः ॥ २२ ॥ अपूर्वं लावण्यं विवसनतनोस्ते
विमृशतां मुनीनां दाराणां समजनि स कोपव्यतिकरः । यतो
भग्ने गुह्ये सकृदऽपि सपर्यां विदधतां ध्रुवं मोक्षोऽश्लीलं किमपि
पुरुषार्थप्रसवि ते ॥ २३ ॥ स्वलावण्याशंसा धृतधनुष्यमऽह्नाय
तृणवत्पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि । यदि स्त्रैणं देवी
यमनिरत देहार्धघटनादवैति त्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः
॥ २४ ॥ श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचराश्चिता-
भस्मालेपः स्रगपि नृकरोटीपरिकरः । अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु
नामैवमखिलं तथापि स्मर्तॄणां वरद परमं मङ्गलमसि ॥ २५ ॥
मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः [illegible] प्रहृष्यद्रोमाणः
प्रमदसलिलोत्सङ्गितदृशः । यदालोक्याह्ला[illegible] ह्रद इव निमज्ज्याऽमृ
तमये दधत्यन्तस्तत्त्वं किमपि [illegible] कसंघातै [illegible]वान् ॥ २६ ॥
त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवहस्त्वमापस्[illegible]त्वं व्योम त्वमु
धरणिरात्मा त्वमिति च । परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिण[illegible]
गिरं न विद्मस्तत्तत्त्वं वयमिह तु यत्त्वं न भवसि ॥ २७ ॥ [illegible]
तिस्रो वृत्तीस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरानकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभि[illegible]
[illegible]स्तीर्णविकृति । तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरनुरुन्धानमणु

मस्तव्यस्तं त्वां शरणद गृणात्योमिति पदम् ॥ २८ ॥ भवः
र्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सह महांस्तथा भीमेशानाविति
दभिधानाष्टकमिदम् । अमुष्मिन्प्रत्येकं प्रविचरति देव श्रुति-
पि प्रियायास्मै धाम्ने प्रणिहितनमस्योस्मि भवते ॥ २९ ॥
पुष्पादुर्भावादऽनुमितमिदं जन्मनि पुरा पुरारे! नैवाहं क्वचिदपि
भवन्तं प्रणतवान् । नमन्मुक्तः सम्प्रत्यतनुरहमग्रेप्यऽनति
मान्महेश ! क्षन्तव्यं तदिदमपराधद्वयमपि ॥ ३० ॥ नमो
दिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमो नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर
हिष्ठाय च नमः । नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमो
मः सर्वस्मै ते तदिदमति सर्वाय च नमः ॥ ३१ ॥ बहलर-
से विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः प्रबलतमसे तत्संहारे हराय
मो नमः । जनसुखकृते सत्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः प्रम-
सि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः ॥ ३२ ॥ कृशपरि-
ति चेतः क्लेशवश्यं क्वचेदं क्व च तव गुणसीमोल्लङ्घिनी शश्व-
द्धिः । इति चकितमऽमन्दीकृत्य मां भक्तिराऽधाद्वरद चर-
योस्ते वाक्यपुष्पोपहारम् ॥ ३३ ॥ सुरभुजगनरेन्द्रैरर्चितस्ये
न्दुमौलेः प्रथितगुणगरिम्णो ज्ञानकारुण्यमूर्तेः । सकलगुणव-
रण्यः पुष्पदन्ताऽभिधानो व्यदधदऽलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतद्वरीयः
॥ ३४ ॥ असितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिन्धुपात्रे सुरतरुवर-
...नी पत्रमुर्वी । लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्व
...मीश ! पारं न याति ॥ ३५ ॥ अह-
...य का... तत्पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पु-
...य त्रैल... लोके रुद्रतुल्यस्तथात्र प्रचुरतरधनायुः
...त्य घोर

पुत्रवान्कीर्तिमांश्च ॥ ३६ ॥ दीक्षा दानं तपस्तीर्थस्नानं योगादिकाः क्रियाः । महिम्नस्तव पाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥ ॥ ३७ ॥ महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः । अघोरान्नापरो मन्त्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम् ॥ ३८ ॥ कुसुमदशननामा सर्वगन्धर्वराजः शशधरवरमौलेर्देवदेवस्य दासः । स खलु निजमहिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषात्स्तवनमिदमकार्षीद्दिव्यदिव्यं महिम्नः ॥ ३९ ॥ सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुं पठति यदि मनुष्यः प्राञ्जलिर्नान्यचेताः । व्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूयमानः स्तवनमिदममोघं पुष्पदन्तप्रणीतम् ॥ ४० ॥ श्रीपुष्पदन्त मुखपङ्कजनिर्गतेन स्तोत्रेण किल्बिषहरेण हरप्रियेण । कण्ठस्थितेन पठितेन समाहितेन सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः ॥ ४१ ॥ इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छङ्करपादयोः । अर्पिता तेन मे देवः प्रीयतां च सदाशिवः ॥ ४२ ॥ क्षे० ॥ आ किं न रक्षसि नयत्ययमन्तको मां हेलावलेपसमयः किमयं महेश । मा नाम भूत्करुणया हृदयस्य पीडा व्रीडापि नास्ति शरणागतमुज्झतस्ते ? । इति श्रीपुष्पदन्तविरचितं शिवमहिमस्तोत्रमनुलेपनार्थम् ॥

शिवचामरार्थं जयस्तुत्यादि शिवस्तोत्रत्रयम् ।

जय सर्वजनाधीश जय गौरीपते शिव । जय [illegible] जयगङ्गाधरेश्वर । जय दग्धपुराध्यक्ष जयसि ॥ २७ । [illegible] जय कामविरामेश जय भक्तानुकम्पक ॥ जयैर्वर्णैस्त्रिभिरभि[illegible] जय निर्गुण सद्गुण । जयानन्तगुणारम्भ ज[illegible]नुरन्धानमणु[illegible]

जय चन्द्रकलाक्रान्त जय नागेन्द्रभूषण । जय पुङ्गवसत्केतो जय त्र्यक्ष महेश्वर ॥ जयान्तकरिपो शम्भो जय ब्रह्मादिकारण । जय पञ्चकलातीत जय शूलिन्कपालभृत् ॥ जयोपेन्द्रेन्द्रचन्द्राद्य जय नन्द्यादिवन्दित । जयानेकगणाधीश जय स्वामिन् महेश्वर ॥ जय विश्वाद्य विश्वेश जय विश्वैककारण । जय विश्वसृजां मुख्य जय विश्वस्य सद्गुरो ॥ जय निरामय जय सुधामय जय धृतामृतदीधिते, जय हतान्तक जय कृतान्तक जय पुरान्तक सद्गते । जय परापर जय दयापर जय नतार्पितसद्गते जय जितस्मर जय महेश्वर जय जय त्रिजगत्पते ॥ इति जयस्तुतिः ॥ व्याप्तचराचरभावविशेषं चिन्मयमेकमनन्तमनादिम् । भैरवनाथमनाथशरण्यं त्वन्मयचित्ततया हृदि वन्दे ॥ १ ॥ त्वन्मयमेतदशेषमिदानीं भाति मम त्वदनुग्रहशक्त्या । त्वं च महेश सदैव ममात्मा स्वात्ममयं मम तेन समस्तम् ॥ २ ॥ स्वात्मनि विश्वगते त्वयि नाथे तेन न संसृतिभीतिकथास्ति । सत्स्वपि दुर्धरदुःखविमोहत्रासविधायिषु कर्मगणेषु ॥ ३ ॥ अन्तक मां प्रति मा दृशमेनां क्रोधकरालतमां विदधीहि । शङ्करसेवनचिन्तनधीरो भीषणभैरवशक्तिमयोस्मि ॥ ४ ॥ इत्थमुपोढभवन्मयसंविद्दीधितिधारितभूरिमिस्रैः । मृत्युयमान्तककर्मपिशाचैर्नाथ नमोस्तु न जातु बिभेमि ॥ ५ ॥ प्रोदितसत्यविबोधमरीचिप्रोक्षितविश्वपदार्थ- ... मृतनिर्भरपूर्णे त्वय्यहमात्मनि निर्वृतिमेमि ... चरमेति यदैव क्लेशदशाऽतनुतापविधात्री । ... त्वदभेदस्तोत्रपरामृतवृष्टिरुदेति ॥ ७ ॥ शङ्कर

सत्यमिदं व्रतदानस्नानतपो भवतापविनाशि । तावकशास्त्रपरामृतचिन्ता सिन्धति चेतसि निर्वृतिधाराः ॥ ८ ॥ नृत्यति गायति हृष्यति गाढं संविदियं मम भैरवनाथ । त्वां प्रियमाप्य सुदर्शनमेकं दुर्लभमन्यजनैः समयज्ञम् ॥ ९ ॥ वसुरसपौषे कृष्णदशम्यामभिनवगुप्तः स्तवमिममकरोत् । येन विभुर्भवमरुसन्तापं शमयति झटिति जनस्य दयालुः ॥ १० ॥ इत्यऽभिनवोक्तभैरवस्तुतिः ॥ अतिभीषणकटुभाषणयमकिंकरपटलीकृतताडनपरिपीडनमरणागमसमये । उमया सह मम चेतसि यमशासन निवसञ्छिव शंकर शिव शंकर हर मे हर दुरितम् ॥ १ ॥ अतिदुर्नयचटुलेन्द्रियरिपुसञ्चयदलितेपविकर्कशकटुजल्पितखलगर्हणचलिते । शिवया सह मम चेतसि शशिशेखर निवसञ्छिव० ॥ २ ॥ भवभञ्जन सुररञ्जन खलवञ्चन पुरहन् दनुजान्तक मदनान्तक रविजान्तक भगवन् । गिरिजावर करुणाकर परमेश्वर भयहञ्छिव श० ॥ ३ ॥ शक्रशासन कृतशासन चतुराश्रमविषये कलिविग्रह भवदुर्ग्रहरिपुदुर्बलसमये । द्विजक्षत्रियवनिताशिशुदरकम्पितहृदये शिव० ॥ ४ ॥ भवसंभवविविधामयपरिपीडितवपुषं दयितात्मजममताभरकलुषीकृतहृदयम् । कुरु मां निजचरणार्चननिरतं भव सततं शिव० ॥ ५ ॥ इति चामरार्थ जयस्तुत्यादि शिवस्तोत्रत्रयम् ॥ अथ पञ्चाक्षरषडक्षरशिवस्तुति-

नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय भस्माङ्गरागा हेश्वराय २७ ।
धिदेवाय दिगम्बराय तस्मै नकाराय न वाय त्रिभिरसि
मातङ्गचर्माम्बरभूषणाय समस्तगीर्वाणगणा य । त्रिनमणु

नाथाय पुरान्तकाय तस्मै मकारा० ॥ २ ॥ शिवामुखाम्भोज-
विकासनाय दक्षस्य यज्ञस्य विनाशकाय । चन्द्रार्कवैश्वानरलो-
चनाय तस्मै शिकारा० ॥ ३ ॥ वसिष्ठकुम्भोद्भवगौतमादि-
मुनीन्द्रवन्द्याय गिरीश्वराय । श्रीनीलकण्ठाय वृषध्वजाय तस्मै
वकारा० ॥ ४ ॥ यज्ञस्वरूपाय जटाधराय पिनाकहस्ताय
सनातनाय । नित्याय शुद्धाय निरञ्जनाय तस्मै यकाराय०
॥ ५ ॥ इति ॥ ॐकारं विन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति
योगिनः । कामदं मोक्षदं चैव ॐकारं तं नमाम्यहम् ॥ १ ॥
न जातो न मृतो यश्च क्षयो यस्य न विद्यते । नमन्ति देवताः
सर्वे नकारं तं० ॥ २ ॥ महादेवं महावक्त्रं महाध्यानपरा-
यणम् । महापापहरं देवं मकारं तं० ॥ ३ ॥ शिवात्परतरो
नास्ति शिवशास्त्रेषु निश्चयः । शमन्ति सर्वपापानि शिकारं०
॥ ४ ॥ वाहनं वृषभो यस्य वासुकिः कण्ठभूषणम् । वामे
शक्तिधरं देवं वकारं तं० ॥ ५ ॥ यत्र तत्र स्थितो देवः
सर्वव्यापी महेश्वरः । यो गुरुः सर्वदेवानां यकारं तं० ॥ ६ ॥
ॐकारं कर्मचक्रेषु नकारं नाभिमण्डले । मकारं हृदये देशे
शिकारं कण्ठभूषणम् । वकारं वक्त्रमध्ये तु यकारं ब्रह्मरन्ध्रगम् ॥
एवं षडक्षरस्तोत्रं यः पठेच्छिवसन्निधौ । शिवलोकमवाप्नोति
शिवेन सह मोदते ॥ इति पञ्चाक्षरषडक्षरशिवस्तुतिः ॥

सत्यमिदं व्रतदानस्नानतपो भवतापविनाशि । तावकशास्त्रपरामृतचिन्ता सिन्धति चेतसि निर्वृतिधाराः ॥ ८ ॥ नृत्यति गायति हृष्यति गाढं संविदियं मम भैरवनाथ । त्वां प्रियमाप्य सुदर्शनमेकं दुर्लभमन्यजनैः समयज्ञम् ॥ ९ ॥ वसुरसपौषे कृष्णदशम्यामभिनवगुप्तः स्तवमिममकरोत् । येन विभुर्भवमरुसन्तापं शमयति झटिति जनस्य दयालुः ॥ १० ॥ इत्यऽभिनवोक्तभैरवस्तुतिः ॥ अतिभीषणकटुभाषणयमकिंकरपटलीकृतताडनपरिपीडनमरणागमसमये । उमया सह मम चेतसि यमशासन निवसञ्छिव शंकर शिव शंकर हर मे हर दुरितम् ॥ १ ॥ अतिदुर्नयचटुलेन्द्रियरिपुसञ्चयदलितेपविकर्कशकटुजल्पितखलगर्हणचलिते । शिवया सह मम चेतसि शशिशेखर निवसञ्छिव० ॥ २ ॥ भवभञ्जन सुररञ्जन खलवञ्चन पुरहन् दनुजान्तक मदनान्तक रविजान्तक भगवन् । गिरिजावर करुणाकर परमेश्वर भयहञ्छिव श० ॥ ३ ॥ शक्रशासन कृतशासन चतुराश्रमविषये कलिविग्रह भवदुर्ग्रहरिपुदुर्बलसमये । द्विजक्षत्रियवनिताशिशुदरकम्पितहृदये शिव० ॥ ४ ॥ भवसंभवविविधामयपरिपीडितवपुषं दयितात्मजममताभरकलुषीकृतहृदयम् । कुरु मां निजचरणार्चननिरतं भव सततं शिव० ॥ ५ ॥ इति चामरार्थं जयस्तुत्यादि शिवस्तोत्रत्रयम् ॥ अथ पञ्चाक्षरषडक्षरशिवस्तुति-

नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय भस्माङ्गरागा[हेश्वराय २७ ।]
धिदेवाय दिगम्बराय तस्मै नकाराय न[शिवाय त्रभिरसि]
मातङ्गचर्माम्बरभूषणाय समस्तगीर्वाणगणा[य । त्रैनसपुर्ण]

नाथाय पुरान्तकाय तस्मै मकारा० ॥ २ ॥ शिवामुखाम्भोज-
विकासनाय दक्षस्य यज्ञस्य विनाशकाय । चन्द्रार्कवैश्वानरलो-
चनाय तस्मै शिकारा० ॥ ३ ॥ वसिष्ठकुम्भोद्भवगौतमादि-
मुनीन्द्रवन्द्याय गिरीश्वराय । श्रीनीलकण्ठाय वृषध्वजाय तस्मै
वकारा० ॥ ४ ॥ यज्ञस्वरूपाय जटाधराय पिनाकहस्ताय
सनातनाय । नित्याय शुद्धाय निरञ्जनाय तस्मै यकाराय०
॥ ५ ॥ इति ॥ ॐकारं विन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति
योगिनः । कामदं मोक्षदं चैव ॐकारं तं नमाम्यहम् ॥ १ ॥
न जातो न मृतो यश्च क्षयो यस्य न विद्यते । नमन्ति देवताः
सर्वे नकारं तं० ॥ २ ॥ महादेवं महावक्त्रं महाध्यानपरा-
यणम् । महापापहरं देवं मकारं तं० ॥ ३ ॥ शिवात्परतरो
नास्ति शिवशास्त्रेषु निश्चयः । शमन्ति सर्वपापानि शिकारं०
॥ ४ ॥ वाहनं वृषभो यस्य वासुकिः कण्ठभूषणम् । वामे
शक्तिधरं देवं वकारं तं० ॥ ५ ॥ यत्र तत्र स्थितो देवः
सर्वव्यापी महेश्वरः । यो गुरुः सर्वदेवानां यकारं तं० ॥ ६ ॥
ॐकारं कर्मचक्रेषु नकारं नाभिमण्डले । मकारं हृदये देशे
शिकारं कण्ठभूषणम् । वकारं वक्त्रमध्ये तु यकारं ब्रह्मरन्ध्रगम् ॥
एवं षडक्षरस्तोत्रं यः पठेच्छिवसन्निधौ । शिवलोकमवाप्नोति
शिवेन सह मोदते ॥ इति पञ्चाक्षरषडक्षरशिवस्तुतिः ॥

अथ शिवनिर्वाणस्तुतिः ॥ क्षमापनस्तुतिश्च ॥

जयत्यऽनन्यसामान्यप्रकृष्टगुणवैभवः । संसारनाटकारम्भ-निर्वाहनकविः शिवः । ॐनमः शिवाय भूतभव्यभाविभाव-भाविने । ॐनमःशिवाय मातृमानमेयकल्पनाजुषे । ॐनमः० भीमकान्तशान्तशक्तिशालिने । ॐ०शाश्वताय शङ्कराय शम्भवे । ॐ० निर्निकेतनिःस्वभावमूर्त्तये । ॐ०निर्विकल्पनिष्प्रपञ्च-संविदे । ॐ०निर्विवादनिष्प्रमाणसिद्धये । ॐ० निर्मलाय निष्कलाय वेधसे । ॐ०पार्थिवाय गन्धमात्रसंविदे । ॐ०षड्-साद्यसाम्यरस्यतृप्तये ॥ १० ॥ ॐ०तैजसाय रूपितानिरूपिणे । ॐ०पावनाय सर्वभावसंस्पृशे । ॐ०नाभसाय शब्दमात्रराविणे । ॐ०निर्गलन्मलव्यपायि पायवे । ॐ०विश्वसृष्टिसौष्ठवैकमेधसे । ॐ०सर्वतः प्रसारिपादसम्पदे । ॐ०विश्वभोग्यभोगयोग्यपाणये । ॐ०वाचकप्रपञ्चवाच्यवाचिने । ॐ० नस्यगन्धसर्वगन्धबन्धवे । ॐ०पुद्गलालिलोलकाग्रशालिने ॥ २० ॥ ॐ०चाक्षुषाय विश्व-रूपसन्दृशे ॐ०तद्गुणत्रयविभागभूतये । ॐ०पौरुषाय भोक्तृ-दाय मानिने । ॐ०सर्वतो नियन्तृतानियामिने । ॐ०कामभे-दकल्पनोपकल्पिने । ॐ०किञ्चिदेव वत्सताकरासृजे । ॐ०-किञ्चिदेव वेत्तृतोपपादिने । ॐ०सर्वभोग्यवर्धनोपरागिणे । ॐ०-शुद्धविद्यतत्त्वमन्त्ररूपिणे । ॐ०व्यक्तयाविकस्वरेशात्मने ॥३०॥ ॐ०सर्ववित्प्रभो सदाशिवाय ते । ॐ०वाच्यवाचकादिषड्‌-भित्तये । ॐ०वर्णमंत्रसत्पदोपपादिने । ॐ०पञ्चधा का

ञ्चपञ्चिने । ॐ०सौरजैनबौद्धशुद्धभागिने । ॐ०भक्तिमात्रल-
भ्यदर्शनाय ते । ॐ०सर्वतो गरीयसां गरीयसे । ॐ०सर्वतो
महीयसां महीयसे । ॐ०सर्वतः स्थवीयसां स्थवीयसे । ॐ०-
तुभ्यमस्त्वणीयसामणीयसे ॥ ४० ॥ ॐ०मन्दराद्रिकन्दराधि-
शायिने । ॐ०जाह्नवीजलोज्ज्वलाभजूटिने । ॐ०भालचन्द्रच-
न्द्रिकाकिरीटिने । ॐ०सोमसूर्यवह्निमात्रनेत्र ते । ॐ०कालकू-
टकण्ठपीठसुश्रिये । ॐ०धर्मरूपपुङ्गवध्वजाय ते । ॐ०भस्मधू-
लिशालिने त्रिशूलिने । ॐ०सर्वलोकपालिने कपालिने । ॐ०-
सर्वदैत्यमर्दिने कपर्दिने । ॐ०नित्यनग्ननाकिने पिनाकिने
॥ ५० ॥ ॐ०नागराजहारिणे विहारिणे । ॐ०शैलजाविलासिने
सुखासिने । ॐ०मन्मथप्रमाथिने पुरप्लुषे । ॐ०कालदेहदाहयु-
क्तिकारिणे । ॐ०नागकृत्तिवाससेऽप्यऽवाससे । ॐ०भीषणश्म-
शानभूमिवासिने । ॐ०पीठशक्तिपीठकोपपादिने । ॐ०सिद्ध-
मन्त्रयोगिने वियोगिने । ॐ०सर्वदक्षक्रतुर्नयादिकारिणे । ॐ०-
सर्वतीर्थतीर्थताविधायिने ॥ ६० ॥ ॐ०साङ्गवेदतद्विचारचा-
रवे । ॐ०षट्पदार्थषोडशार्थवादिने । ॐ०सांख्ययोगपाञ्चरा-
त्रपञ्चिने । ॐ०धातृविष्णुशर्वकादिरूपिणे । ॐ० धातृविष्णु
प्रमुखात्मरूपिणे । ॐ०भोग्यदाय भोग्यभोगरूपिणे । ॐ०पा-
रगाय पारणाय मन्त्रिणे । ॐ०पारमार्थपार्थिवस्वरूपिणे । ॐ०-
सर्वमण्डलाधिपत्यशालिने । ॐ०सर्वशक्तिवासनानिवासिने
॥ ७० ॥ ॐ०सर्वतन्त्रवासनारसात्मने । ॐ०सर्वमन्त्रदेवतानि-
...िने । ॐ०स्वस्थिताय नित्यकर्ममालिने । ॐ०कालकल्प-
...न सुतल्पिने । ॐ०भक्तकाय सौख्यदाय शम्भवे । ॐ०-
...वः स्वरात्मलक्ष्यलक्षिणे । ॐ०शून्यभावशान्तरूपधारिणे ।

ॐ०सर्वभावशुद्धबुद्धिहेतवे । ॐ०सर्वसिद्धिदायिने सुमायिने । ॐ०भक्तिमात्रसंस्तुताय शूलिने ॥ ८० ॥ ॐनमः शिवाय भास्वते । ॐ०भर्ग ते । ॐ०शर्व ते । ॐ०गर्व ते । ॐ०खर्व ते । ॐ०पर्व ते । ॐ०रुद्र ते । ॐ०भीम ते । ॐ० विष्णवे । ॐ०जिष्णवे । ९० । ॐ०धन्विने । ॐ०खड्गिणे ॐ०चर्मिणे । ॐ०वर्मिणे । ॐ०कर्मिणे । ॐ०धर्मिणे । ॐ०भामिने । ॐ०कामिने । ॐ०योगिने । ॐ०भोगिने । ॐ०तिष्ठते । ॐगच्छते । ॐ०हेतवे । ॐ०सेतवे । ॐ०सर्वतः । ॐ०सर्वशः । ॐ०सर्वदा । ॐ०सर्वथः १०८ ॥ भव शर्व रुद्रहर शंकर भूतपते गिरिश गिरीश भर्ग शशिशेखर नीलगल । त्रिनयन वामदेव गिरिजाधव माररिपो जयजय देवदेव भगवन्भवतेऽस्तु नमः ॥ एतामष्टोत्तरशतनमस्कारसंस्कारपूतां भूतार्थव्याहृतिनुतिमुदाहृत्य मृत्युञ्जयस्य । कश्चिद्विद्वान्यदिह कुशलं सञ्चिनोति स किञ्चित्तेनान्येषां भवति पठतामीप्सितार्थस्य सिद्धिः । इति व्यासोक्तनिर्वाणस्तुतिः ॥ अथ शिवापराधक्षमापनस्तुतिः ॥ ॐआदौ कर्मप्रसङ्गात्कलयति कलुषे मातृकुक्षौ स्थितं मां विण्मूत्रामेध्यमध्ये क्वथयति नितरां जाठरो जातवेदाः । यद्यद्वै तत्र दुःखं व्यथयति विविधं शक्यते केन वक्तुं क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भोः श्रीमहादेव शम्भो ॥ १ ॥ बाल्ये दुःखातिरेकान्मललुलितवपुः स्तन्यपाने पिपासी नो शक्यश्चेन्द्रियेभ्यो भवगुणजनितैर्जन्तुभिः संप्रदष्टः । नानारोगादिदुःखाद्रुदनपरवशः शङ्करं न स्मरामि क्षन्तव्यो मेऽपराधः० ॥२॥ प्रौढोऽहं यौवनस्थो विषयविषधरैः

पञ्चभिर्मर्मसन्धौ दष्टो नष्टो विवेकात्सुतधनयुवतिस्वादुसौख्ये निषण्णः । शैवीचिन्ताविहीनः परतपनरतो मानगर्वाधिरूढः क्षन्तव्यो मे० ॥ ३ ॥ वार्धक्ये चेन्द्रियाणां विनतिगतमतिश्चाधिदैवाधिभूतैर्दुःखै रोगैर्वियोगैस्त्वनवसितवपुः प्रौढिहीनोऽतिदीनः । मिथ्यामोहाभिलाषैर्भ्रमन्नऽलिगणवत् धूर्जटेर्ध्यानभ्रष्टः क्षन्तव्यो० ॥ ४ ॥ स्नात्वा प्रत्यूषकाले स्नपनविधिकृते नाहृतं गाङ्गतोयं पूजार्थं वा कदाचिद्बहुतरगहनात्खण्डबिल्वीदलानि । नानीता पद्ममाला सरसि विकसिता गन्धपुष्पैस्त्वदर्थं क्षन्तव्यो० ॥ ५ ॥ स्थित्वा पद्मासनेहं प्रणवयुतमरुत्कुण्डलीसूक्ष्ममार्गाच्छान्ति नीते स्वस्वान्ते प्रकटितविभवं ज्योतिरूपं पराख्यम् । लिङ्गज्ञैर्ब्रह्मवाक्यैः सकलतनुगतं शङ्करं न स्मरामि क्षन्तव्यो० ॥ ६ ॥ ध्यात्वा चित्ते शिवाख्यं प्रचुरतरधनं नैव दत्तं द्विजेभ्यो हव्यं ते लक्षसंख्यैर्हुतवहवदने नार्पितं बीजमन्त्रैः । नो तप्तं गाङ्गतीरे व्रतजपनियमैरुद्रजाप्यैर्न वेदैः क्षन्तव्यो० ॥ ७ ॥ दुग्धैर्मध्वाज्ययुक्तैर्दधिसितसहितैः स्नापितं नैव लिङ्गं नो लिप्तं चन्दनाद्यैः कनकविरचितैः पूजितं न प्रसूनैः । धूपैः कर्पूरदीपैर्विविधरसयुतैर्नैव भक्ष्योपहारैः क्षन्तव्यो० ॥ ८ ॥ नो शक्यं स्मार्तकर्म प्रतिपदगहनं प्रत्यभिज्ञातुमीषच्छ्रौतं वाक्यं कथं वा द्विजवरशमदं ब्रह्ममार्गप्रदीपम् । ज्ञेयो धर्मो विचारैः श्रवणमनु मया किं निदिध्यासितव्यं क्षन्तव्यो० ॥ ९ ॥ नग्नो निःसङ्गशुद्धस्त्रिगुणविरहितो ध्वस्तमोहान्धकारो नासाग्रे न्यस्तदृष्ट्या विदितभवगुणैर्नैव नेष्टः कदाचित् । उन्मत्तावस्थया त्वं विगतकलिमले स्वाशये नापि प्राप्तः क्षन्तव्यो० ॥ १० ॥ चन्द्रोद्भासितशेखरे स्मरहरे

गङ्गाधरे शंकरे सर्पैर्भूषितकण्ठकर्णविवरे नेत्रोत्थवैश्वानरे । दन्तित्वकृतसुन्दराम्बरधरे त्रैलोक्यसारे हरे मोक्षार्थं कुरु चित्तवृत्तिमखिलामन्यैस्तु किं कर्मभिः ॥ ११ ॥ किंवाऽनेन धनेन वाजिकरिभिः प्राप्तेन राज्येन किं किंवा पुत्रकलत्रमित्रपशुभिर्देहेन गेहेन किम् । ज्ञात्वैतत् क्षणभङ्गुरं सपदि रे त्याज्यं मनो दूरतः स्वात्मस्थं गुरुवाक्यतो भज भज श्रीपार्वतीवल्लभम् ॥१२॥ आयुर्नश्यति पश्यतां प्रतिदिनं याति क्षयं यौवनं प्रत्यायान्ति गताः पुनर्न दिवसाः कालो जगद्भक्षकः । लक्ष्मीस्तोयतरङ्गभङ्गचपला विद्युच्चलं जीवितं तस्मान्मां शरणागतं शरणद त्वं रक्ष रक्षाधुना ॥ १३ ॥ आत्मा त्वं गिरिजा मतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः । सञ्चारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम् ॥ १ ॥ ब्रूषे नोत्तरमङ्ग पश्यसि न मामेतादृशं दुःखितं विज्ञप्तिं बहुधा कृतां न शृणुषे नायासि मन्मानसे । संसारार्णवगर्तमध्यपतितं प्रायेण नालम्बसे वाक्चक्षुःश्रवणाङ्घ्रिपाणिरहितं त्वामाह सत्यं श्रुतिः ॥ २ ॥ करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा श्रवणनयनजं वा मानसं वाऽपराधम् । विदितमविदितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शम्भो ॥१४॥ इति शंकराचार्यकृता शिवापराधक्षमापनस्तुतिः ॥ ॥

अथ रावणकृतदीनाक्रन्दाख्यशिवक्षमापणम् ॥ ॐगौरीश्वराय भुवनत्रयकारणाय भक्तप्रियाय भवभीतिभिदे भवाय । शर्वाय

दुःखशमनाय वृषध्वजाय रुद्राय कालदहनाय नमः शिवाय॥१॥ सर्वेश्वरत्वे सति भस्मशायिने ह्युमापतित्वे सति चोर्ध्वरेतसे। वित्तेशभृत्ये सति चर्मवाससे निवृत्तरागाय नमस्तपस्विने ॥२॥ ॐकारेण विहीनस्य नित्यशुद्धिभ्रचेतसः । तापत्रयाग्नितप्तस्य त्राणं कुरु महेश्वर ॥ ३ ॥ कायपोषणसक्तस्य रोगशोकाकुलस्य च । भवार्णवनिमग्नस्य त्राणं० ॥ ४ ॥ मदनोरगदष्टस्य क्रोधाग्निज्वलितस्य च । लोभमोहादिसक्तस्य त्राणं० ॥ ५ ॥ तृष्णाशृङ्खलया नाथ बद्धस्य भवपञ्जरे । कृपार्द्रदीनचित्तस्य त्राणं० ॥ ६ ॥ भटैर्नानाविधैर्घोरैर्यमस्याज्ञाविधायकैः । तां दिशं नीयमानस्य त्राणं० ॥ ७ ॥ दुष्टस्य नष्टचित्तस्य श्रेष्ठमार्गोज्झितस्य च । अनाथस्य जगन्नाथ त्राणं० ॥ ८ ॥ संसारपाशदृढबन्धनपीडितस्य मोहान्धकारविषमेषु निपातितस्य । कामार्दितस्य भयरागखलीकृतस्य दीनस्य मे कुरु दयां परलोकनाथ ॥ ९ ॥ दीनोस्मि मन्दधिषणोस्मि निराश्रयोस्मि दासोस्मि साधुजनतापरिवर्जितोस्मि । दुष्टोस्मि दुर्भगतमोस्मि गतत्रपोस्मि धर्मोज्झितोस्मि विकलोस्मि कलङ्कितोस्मि ॥ १० ॥ भीतोस्मि भङ्गुरतमोस्मि भयानकोस्मि शंकाशतव्यतिकराकुलचेतनोस्मि । रागादिदोषनिकरैर्मुखरीकृतोस्मि सत्यादिशौचनियमैः परिवर्जितोस्मि ॥ ११ ॥ जन्माटवीभ्रमणमारुतखेदितोस्मि नित्यामयोस्म्यऽशरणोस्म्यऽसमञ्जसोस्मि । आशानिरङ्कुशपिशाचिकयार्दितोस्मि हास्योस्मि हा पशुपते शरणागतोस्मि ॥ १२ ॥ हा हतोस्मि विनष्टोस्मि दष्टोस्मि चपलेन्द्रियैः । भवार्णवनिमग्नोस्मि किं त्रातुं मम नार्हसि ॥ १३ ॥ यदि नास्मि महापापी

यदि नासि भयातुरः । यदि नेन्द्रियसंसक्तस्तत्कोर्थः शरणे मम ॥ १४ ॥ आर्तो मत्सदृशो नान्यस्त्वत्तो नान्यः कृपापरः। तुल्य एवावयोर्योगः कथं नाथ न पाहि माम् ॥ १५ ॥ आकर्णयाऽऽशु कृपणस्य वचांसि सम्यक् लब्धोसि नाथ बहुभिर्ननु जन्मवृन्दैः । अद्य प्रभो यदि दयां कुरुषे न मे त्वं तत्तः परं कथय कं शरणं व्रजामि ॥ १६ ॥ द्वेष्योहं सर्वजन्तूनां बन्धूनां च विशेषतः । सुहृद्वर्गस्य सर्वस्य किमन्यत्कथयामि ते ॥१७॥ मातापितृविहीनस्य दुःखशोकातुरस्य च । आशापाशनिबद्धस्य रागद्वेषयुतस्य च ॥ १८ ॥ देवदेव जगन्नाथ शरणागतवत्सल। नान्यस्त्रातास्ति मे कश्चित्त्वदृते परमेश्वर ॥ १९ ॥ भीतोस्मि कालवशगोस्मि निराश्रयोस्मि खिन्नोस्मि दुःखजलधौ पतितोस्मि शम्भो । आर्त्तोस्मि मोहपटलेन समावृतोस्मि त्वां चन्द्रचूड शरणं समुपागतोस्मि ॥ २० ॥ आशिखान्तं निमग्नोस्मि दुस्तरे भवकर्दमे । प्रसीद कृपया शम्भो पादाग्रेणोद्धरस्व माम् ॥२१॥ श्रुत्वा मे भवभीतस्य भगवन्करुणा गिरः । तथा कुरु यथा भूयो न बाधन्ते भवापदः ॥ २२ ॥ समयशतविलुप्तं भक्तिहीनं कुचैलं मलिनवसनगात्रं निर्दयं पापशीलम् । रविजभ्रुकुटिभीतं रोगिणं प्राप्तदुःखं खलजनपरिभूतं रक्ष मां सर्वशक्ते ॥ २३ ॥ आपन्नोस्मि शरण्योसि सर्वावस्थासु सर्वदा। भगवंस्त्वां प्रपन्नोस्मि रक्ष मां शरणागतम् ॥ २४ ॥ जातस्य जायमानस्य गर्भस्थस्यापि देहिनः । माभूत्तत्र कुले जन्म यत्र शम्भुर्न दैवतम् ॥ २५ ॥ शङ्करस्य च ये भक्ताः शान्तास्तद्गतमानसाः । तेषां दासस्य दासोहं भूयां जन्मनि जन्मनि ॥ २६ ॥ नमस्कारा-

दिसंयुक्तं शिवइत्यक्षरद्वयम् । जिह्वाग्रे वर्तते यस्य सफलं तस्य जीवितम् ॥ २७ ॥ यत्कृतं यत्करिष्यामि तत्सर्वं न मया कृतम् । त्वया कृतं तु फलभुक्त्वमेव परमेश्वर ॥ २८ ॥ यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत् । मया दासेन विज्ञप्तं क्षम्यतां परमेश्वर ॥ २९ ॥ इति श्रीरावणकृता दीनाक्रन्दनस्तुतिः ॥

अथ कैवल्योपनिषत् ॥

ॐअथाश्वलायनो भगवन्तं परमेष्ठिनं परिसमेत्योवाच । अधीहि भगवन् ! ब्रह्मविद्यां वरिष्ठां सदा सद्भिः सेव्यमानां निगूढाम् । यथाऽचिरात्सर्वपापं विपोह्य परात्परं पुरुषं याति विद्वान् ॥ तस्मै स होवाच पितामहश्च श्रद्धाभक्तिध्यानयोगादऽवेहि । न कर्मणा न प्रजया धनेन त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः ॥ परेण नाकं निहितं गुहायां विभ्राजदेतद्यतयो विशन्ति । वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः संन्यासयोगाद्यतयः शुद्धसत्त्वाः ॥ ते ब्रह्मलोकेषु परान्तकाले परामृताः परिमुच्यन्ति सर्वे॥ विविक्तदेशे च सुखासनस्थः शुचिः समग्रीवशिरःशरीरः । अत्याश्रमस्थः सकलेन्द्रियाणि निरुद्ध्य भक्त्या स्वगुरुं प्रणम्य ॥ हृत्पुण्डरीके विरजं विशुद्धं विचिन्त्य मध्ये विशदं विशोकम् । अचिन्त्यमऽव्यक्तमनन्तरूपं शिवं प्रशान्तममृतं ब्रह्मयोनिम् ॥ [त]थादिमध्यान्तविहीनमेकं विभुं चिदानन्दस्वरूपमद्भुतम् । [उमा]सहायं परमेश्वरं प्रभुं त्रिलोचनं नीलकण्ठं प्रशान्तम् ॥ [ध्या]त्वा मुनिर्गच्छति भूतयोनिं समस्तसाक्षिं तमसः परस्तात् ॥

यदि नासि भयातुरः । यदि नेन्द्रियसंसक्तस्तत्कोर्थः शरणे मम ॥ १४ ॥ आर्तो मत्सदृशो नान्यस्त्वत्तो नान्यः कृपापरः । तुल्य एवावयोर्योगः कथं नाथ न पाहि माम् ॥ १५ ॥ आकर्ण्याऽशु कृपणस्य वचांसि सम्यक् लब्धोसि नाथ बहुभिर्ननु जन्मवृन्दैः । अद्य प्रभो यदि दयां कुरुषे न मे त्वं त्वत्तः परं कथय कं शरणं व्रजामि ॥ १६ ॥ द्वेष्योहं सर्वजन्तूनां बन्धूनां च विशेषतः । सुहृद्वर्गस्य सर्वस्य किमन्यत्कथयामि ते ॥१७॥ मातापितृविहीनस्य दुःखशोकातुरस्य च । आशापाशनिबद्धस्य रागद्वेषयुतस्य च ॥ १८ ॥ देवदेव जगन्नाथ शरणागतवत्सल । नान्यस्त्रातास्ति मे कश्चित्त्वदृते परमेश्वर ॥ १९ ॥ भीतोस्मि कालवशगोस्मि निराश्रयोस्मि खिन्नोस्मि दुःखजलधौ पतितोस्मि शम्भो । आर्त्तोस्मि मोहपटलेन समावृतोस्मि त्वां चन्द्रचूड शरणं समुपागतोस्मि ॥ २० ॥ आशिखान्तं निमग्नोस्मि दुस्तरे भवकर्दमे । प्रसीद कृपया शम्भो पादाग्रेणोद्धरस्व माम् ॥२१॥ श्रुत्वा मे भवभीतस्य भगवन्करुणा गिरः । तथा कुरु यथा भूयो न बाधन्ते भवापदः ॥ २२ ॥ समयशतविलुप्तं भक्तिहीनं कुचैलं मलिनवसनगात्रं निर्दयं पापशीलम् । रविजभ्रुकुटिभीतं रोगिणं प्राप्तदुःखं खलजनपरिभूतं रक्ष मां सर्वशक्ते ॥ २३ ॥ आपन्नोस्मि शरण्योसि सर्वावस्थासु सर्वदा । भगवंस्त्वां प्रपन्नोस्मि रक्ष मां शरणागतम् ॥ २४ ॥ जातस्य जायमानस्य गर्भस्थस्यापि देहिनः । माभूत्तत्र कुले जन्म यत्र शम्भुर्न दैवतम् ॥ २५ ॥ शङ्करस्य च ये भक्ताः शान्तास्तद्गतमानसाः । तेषां दासस्य दासोहं भूयां जन्मनि जन्मनि ॥ २६ ॥ नमस्कारा-

दिसंयुक्तं शिवइत्यक्षरद्वयम् । जिह्वाग्रे वर्तते यस्य सफलं तस्य जीवितम् ॥ २७ ॥ यत्कृतं यत्करिष्यामि तत्सर्वं न मया कृतम् । त्वया कृतं तु फलभुक्त्वमेव परमेश्वर ॥ २८ ॥ यदक्षर-पदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत् । मया दासेन विज्ञप्तं क्षम्यतां परमेश्वर ॥ २९ ॥ इति श्रीरावणकृता दीनाक्रन्दनस्तुतिः ॥

अथ कैवल्योपनिषत् ॥

ॐअथाश्वलायनो भगवन्तं परमेष्ठिनं परिसमेत्योवाच । अधीहि भगवन् ! ब्रह्मविद्यां वरिष्ठां सदा सद्भिः सेव्यमानां निगूढाम् । यथाऽचिरात्सर्वपापं विपोह्य परात्परं पुरुषं याति विद्वान् ॥ तस्मै स होवाच पितामहश्च श्रद्धाभक्तिध्यानयो-गादऽवेहि । न कर्मणा न प्रजया धनेन त्यागेनैके अमृतत्व-मानशुः ॥ परेण नाकं निहितं गुहायां विभ्राजदेतद्यतयो वि-शन्ति । वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः संन्यासयोगाद्यतयः शुद्ध-सत्त्वाः ॥ ते ब्रह्मलोकेषु परान्तकाले परामृताः परिमुच्यन्ति सर्वे॥ विविक्तदेशे च सुखासनस्थः शुचिः समग्रीवशिरःशरीरः । अत्याश्रमस्थः सकलेन्द्रियाणि निरुद्ध्य भक्त्या स्वगुरुं प्रणम्य ॥ हृत्पुण्डरीके विरजं विशुद्धं विचिन्त्य मध्ये विशदं विशोकम् । अचिन्त्यमऽव्यक्तमनन्तरूपं शिवं प्रशान्तममृतं ब्रह्मयोनिम् ॥ [त]थादिमध्यान्तविहीनमेकं विभुं चिदानन्दस्वरूपमद्भुतम् । [उ]मासहायं परमेश्वरं प्रभुं त्रिलोचनं नीलकण्ठं प्रशान्तम् ॥ [ध्या]त्वा मुनिर्गच्छति भूतयोनिं समस्तसाक्षिं तमसः परस्तात् ॥

स ब्रह्मा स शिवः सेन्द्रः सोक्षरः परमः स्वराट्। स एव विष्णुः स प्राणः स कालोग्निः स चन्द्रमाः ॥ स एव सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यं सनातनम् । ज्ञात्वा तं मृत्युमत्येति नान्यः पन्था विमुक्तये ॥ सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि । संपश्यन्ब्रह्म परमं याति नान्येन हेतुना ॥ आत्मानमरणिं कृत्वा प्रणवं चोत्तरारणिम् । ज्ञाननिर्मथनाभ्यासात्पाशं दहति पण्डितः ॥ स एव मायापरिमोहितात्मा शरीरमास्थाय करोति सर्वम् । स्त्रियान्नपानादिविचित्रभोगैः स एव जाग्रत्परितृप्तिमेति । स्वप्ने स जीवः सुखदुःखभोक्ता स्वमायया कल्पितविश्वभोगे । सुषुप्तिकाले सकले प्रलीने तमोभिभूतः सुखरूपमेति ॥ पुनश्च जन्मान्तरकर्मयोगात्स एव जीवः स्वपिति प्रबुद्धः । पुरत्रये क्रीडति यश्च जीवस्ततस्तु जातं सकलं विचित्रम् ॥ आधारमानन्दमखण्डबोधं यस्मिँल्लयं याति पुरत्रयं च ॥ एतस्माज्जायते प्राणो मनः सर्वेन्द्रियाणि च । खं वायुर्ज्योतिरापश्च पृथ्वी विश्वस्य धारिणी ॥ यत्परं ब्रह्म सर्वात्मा विश्वस्याऽयतनं महत् । सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरं नित्यं तत्त्वमेव त्वमेव तत् ॥ जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यादिप्रपञ्चं यत्प्रकाशते । तद्ब्रह्माहमिति ज्ञात्वा सर्वबन्धैः प्रमुच्यते ॥ त्रिषु धामसु यद्भोग्यं भोक्ता भोगश्च यो भवेत् । तेभ्यो विलक्षणः साक्षी चिन्मात्रोहं सदाशिवः ॥ मय्येव सकलं जातं मयि सर्वं प्रतिष्ठितम् । मयि सर्वं लयं याति तद्ब्रह्माद्वयमस्म्यहम् ॥ अणोरणीयानहमेव तद्वन्महानहं विश्वमिदं विचित्रम् । पुरातनोहं पुरुषोहमीशो हिरण्मयोहं शिवरूपमस्मि ॥ अपाणिपादोहमचिन्त्यशक्तिः पश्याम्यऽचक्षुश्च

शृणोम्यऽकर्णः । अहं विजानामि विविक्तरूपो नचास्ति वेत्ता मम चित्सदाहम् ॥ वेदैरनेकैरहमेव वेद्यो वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम् ॥ न पुण्यपापे मम नास्ति नाशो न जन्मदेहेन्द्रियबुद्धिरस्ति । न भूमिरापो मम वह्निरस्ति नचानिलो मेस्ति नचाम्बरं च ॥ एवं विदित्वा परमात्मरूपं गुहाशयं निष्कलमद्वितीयम् । समस्तसाक्षिं सदसद्विहीनं प्रयाति शुद्धं परमात्मरूपम् ॥ यः शतरुद्रियमधीते सोग्निपूतो भवति । सुरापानात्पूतो भवति ब्रह्महत्यायाः पू० सुवर्णस्तेयात्पू० अकृत्यकृत्यात्पू०॥ तस्मादऽविमुक्तमात्माश्रितो भवत्यऽत्याश्रमी सर्वदा सकृद्वा जपेत् अनेन ज्ञानमाप्नोति संसारार्णवनाशनम् । तस्मादेवं विदित्वैनं कैवल्यं फलमश्नुते कैवल्यं फलमश्नुते ॥ इत्यथर्ववेदे कैवल्योपनिषत् ॥

अथ शिवपूजा प्रारभ्यते ।

'अस्य श्री आसनशोधनमंत्रस्य मेरुपृष्ठऋपिः, सुतलं छन्दः, कूर्मो देवता आसनशोधने विनियोगः । ह्रीं पृथिव्यै आधारशक्त्यै समालभनं गन्धोनमः अर्घोनमः पुष्पं नमः । पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता । त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ॥ "नमस्कार करना"॥ शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् । प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ अभिप्रेतार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरैरपि । सर्वविघ्नच्छिदे तस्मै गणाधिपतये नमः ॥ कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारम् । सदा रमन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानीसहितं नमामि ॥ गुरुर्ब्रह्मा गुरु-

विष्णुर्गुरुः साक्षान्महेश्वरः । गुरुरेव जगत्सर्वं तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ गुरवे नमः परमगुरवे नमः परमेष्ठिने गु० परमाचार्याय नमः आद्यसिद्धिभ्यो नमः ॥ "न्यास करना" ॐअङ्गुष्ठाभ्यां नमः, न तर्जनीभ्यां नमः, मः मध्यमाभ्यां नमः, शि अनामिकाभ्यां नमः, वा कनिष्ठिकाभ्यां नमः, य करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ "इति करन्यासः" ॥ "अथ षडङ्गन्यासः" ॥ ॐ हृदयाय नमः, न शिरसे स्वाहा, मः शिखायै वौषट्, शि कवचाय हुं, वा नेत्र-त्रयाय वौषट्, य अस्त्राय फट् ॥ "चारों तरफ तिलें फेंकना" ॥ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थिताः । ये भूता विघ्नक-र्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥ प्राणायामः ॥ "मुख और पैरों को पानीसे छडकना" तीर्थे स्तेयं तीर्थमेव समानानां भवति मानः शंसो अरुरुषो धूर्तिः प्राणङ् मर्त्यस्य रक्षाऽणो ब्रह्मणस्पते ॥ "पवित्र धारना" वसोः पवित्रमसि शतधारं वसूनां पवित्रमसि सहस्रधारमयक्ष्मा वः प्रजया संसृजामि रायस्पोषेण बहुला भ-वन्ति ॥ "अपने आपको गन्धादिक लगाना" ॥ स्वात्मने शिव-स्वरूपाय समालभनं गन्धो नमः अर्घोनमः पुष्पं नमः ॥ "दीप को" स्वप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः । प्रसीद मम गोविन्द दीपोयं परिकल्पितः ॥ "धूप को" ॥ वनस्पतिरसो दिव्यो गन्धाढ्यो गन्धवत्तमः । आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोयं परिकल्पितः ॥ "सूरजको" ॥ नमो धर्मनिधानाय नमः स्वकृत-साक्षिणे । नमः प्रत्यक्षदेवाय भास्कराय नमोनमः ॥ "पानी छोडना" ॥ यत्रास्ति माता न पिता न बन्धुर्भ्रातापि नो यत्र सुहृज्जनश्च । न ज्ञायते यत्र दिनं न रात्रिस्तत्रात्मदीपं शरणं प्र-

द्ये ॥ आत्मने शिवस्वरूपाय दीपधूपसङ्कल्पातिसिद्धिरस्तु दी-
पोनमः धूपोनमः ॥ ॐतत्सद्ब्रह्माऽद्यतावत्तिथावऽद्याऽमुकमा-
सस्याऽमुकपक्षस्य तिथावऽमुकायामाऽत्मनो वाङ्मनःकायोपार्जि-
तपापनिवारणार्थं श्रीसदाशिवप्रीत्यर्थममुककामनासिद्ध्यर्थं भ-
वायदेवाय, शर्वायदेवाय, रुद्रायदेवाय पशुपतयेदेवाय उग्रा-
यदेवाय भीमायदेवाय महादेवाय ईशानायदेवाय पार्वतीसहि-
ताय परमेश्वराय दीपोनमः धूपोनमः ॥ अपसव्येन । पित्रे पि-
तामहाय प्रपितामहाय इत्यादिभ्यः दीपःस्वधा धूपःस्वधा ॥
सव्येन ॥ "विष्टरसहितपानी में तिन वार फूल और गन्ध
छोडना" ॥ संवः सृजामि हृदयं संसृष्टं मनो अस्तुवः ॥ १ ॥
संसृष्टास्तन्वः सन्तुवः संसृष्टः प्राणो अस्तुवः ॥ २ ॥ संय्यावः
प्रियास्तन्वः संप्रिया हृदयानि वः । आत्मा वो अस्तु संप्रियः
संप्रियास्तन्वो मम ॥ ३ ॥ "वह पानी देव पर छोडना" ॥
अश्विनोः प्राणस्तौ ते प्राणन्दत्तां तेन जीव मित्रावरुणयोः प्रा-
णस्तौ ते प्राणं दत्तां तेन जीव बृहस्पतेः प्राणः स ते प्राणं द-
दात्तेन जीव ॥ "देव को न्यास करना"॥ ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः
इत्यादि॥"पृच्छा पडना"तन्महेशाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि
तन्नः शिवः प्रचोदयात् ॥ ३ ॥ तत्सद्ब्रह्माऽद्यातावत्०। भवस्य-
देवस्य शर्वस्यदेवस्य रुद्रस्य देवस्य पशुपतेर्देवस्य उग्रस्य देवस्य
भीमस्य देवस्य महादेवस्य ईशानस्य देवस्य पार्वतीसहितस्य परमे-
श्वरस्य अर्चामहं करिष्ये ॐ कुरुष्व ॥ यवान्विकीर्य ॥ "आसन
देना"॥ विश्वेश्वर महादेव राजराजेश्वरेश्वर । आसनं दिव्यमी-
शान दास्येहं परमेश्वर ॥ भवस्यदेवस्य० इदमासनं नमः ॥

"आवाहन करना"॥ भवायदेवाय० युष्मान्वः पूजयामि ॐपू-
जय। भवंदेवं शर्वदेवं रुद्रंदेवं पशुपतिंदेवं उग्रंदेवं भीमंदेवं महादेवं
ईशानंदेवं पार्वतीसहितंपरमेश्वरं आवाहयिष्यामि ॐमावाहय॥
आयाहि भगवञ्छम्भो सर्वेश गिरिजापते। प्रसन्नो भव देवेश
नमस्तुभ्यं हि शंकर॥ लिङ्गेत्र भक्तदयया क्षणमात्रमेकं स्थानं वि-
धाय भव सन्निहितां पुरारे। सर्वेश विश्वमय हृत्कमलाधिरूढः
पूजां गृहाण भगवन्भव मेद्य तुष्टः॥ भूमेर्जलात्तु पवनादन-
लाद्धिमांशोरुष्णांशुतोहृदयतो गगनात्समेत्य। लिङ्गेत्र सन्म-
णिमये मदनुग्रहार्थं भक्त्यैकलभ्य भगवन्कुरु सन्निधानम्॥ भ-
गवन्पार्वतीनाथ भक्तानुग्रहकारक। असद्दयानुरोधेन सन्नि-
धानं कुरु प्रभो॥ ३॥ इत्याहूय तु गायत्रीं त्रिः समुच्चार्य त-
त्त्ववित्। मनसा चिन्तितैर्द्रव्यैर्देवमात्मनि पूजयेत्॥ तेजोरूपं
ततः क्षिप्त्वा प्रतिमायां पुनर्यजेत्॥ प्राणायामः॥ पाद्यार्थे उ-
दकं नमः॥ "पानी हाथसे पात्र में वापस छोडना"॥ शन्नो-
देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये, शंय्योरभिस्रवन्तु नः॥ "यह
द्रव्य उसमें छोडना" लाजाश्च कुङ्कुमं चैव सर्वौषधिसमन्वितम्।
दर्भाङ्कुरं जलं चैव पञ्चाङ्गं पाद्यलक्षणम्॥ भगवन्तः पाद्यं
॥ २॥ महादेव महेशान महानन्द परात्पर। गृहाण पाद्यं मद्दत्तं
पार्वतीसहितेश्वर। भवायदेवाय० पाद्यंनमः॥ "पाद्यशेष छो-
डना"॥ पुनः शन्नोदेवी०॥ "यह द्रव्य छोडना" आपः क्षीरं
कुशाग्राणि घृतं च दधि तण्डुलाः। यवाः सिद्धार्थकाश्चेति
ह्यर्घ्यमष्टाङ्गमुच्यते। भगवन्तोऽर्घ्यं॥ २॥ त्र्यम्बकेश सदाधार
विपदां प्रतिघातक। अर्घ्यं गृहाण देवेश सम्पत्सर्वार्थसाधक॥

भवदेव शर्वदेव रुद्रदेव पशुपते देव उग्रदेव भीमदेव महादेव ईशानदेव पार्वतीसहितपरमेश्वर इदं वोऽर्घ्यं नमः ॥ त्रिपुरान्तक दीनार्त्तिनाश श्रीकण्ठ तुष्टये। गृहाणाचमनं देव पवित्रोदककल्पितम् ॥ भवायदेवाय० आचमनीयं नमः ॥ त्रिकालकालकालेश संहारकरणोद्यत।स्नानं तीर्थाहृतैस्तोयैर्गृहाण परमेश्वर॥भवाय देवाय०मन्त्रस्नानीयं नमः॥ पानीयान्तरितैः पयोदधिघृतैः क्षौद्रेक्षुभिः सौषधैर्व्रीह्यद्भिः कुसुमोदकैः फलजलैः सिद्धार्थलाजोदकैः। गन्धाद्भिः शुभहेमरत्नसलिलैरित्थं सदा चोत्तमैर्दद्यात्पञ्चदशाम्बुना सह महास्नानानि शम्भोः क्रमात् ॥ असंख्याताः सहस्राणि ये रुद्रा अधि भूम्याम् । तेषां सहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि ॥ १ ॥ येऽस्मिन्महत्यर्णवेऽन्तरिक्षे भवा अधि । तेषां सह० ॥ २ ॥ ये नीलग्रीवाः शितिकण्ठा दिवं रुद्रा उपाश्रिताः। तेषां० ॥ ३ ॥ ये नीलग्रीवाः शितिकण्ठाः शर्वा अधः क्षमाचराः । तेषां० ॥ ४ ॥ ये वनेषु शिल्पिञ्जरा नीलग्रीवा विलोहिताः । तेषां० ॥ ५ ॥ येऽन्नेषु विविध्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान् । तेषां० ॥ ६ ॥ ये भूतानामधिपतयो विशिखासः कपर्दिनः । तेषां० ॥ ७ ॥ ये पथीनां पथि रक्षय ऐडमृदाय व्युधः । तेषां० ॥ ८ ॥ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकावन्तो निषङ्गिणः । तेषां० ॥ ९ ॥ य एतावन्तो वा भूयांसो वा दिशो रुद्रा वितिष्ठिरे । तेषां० ॥ १० ॥ ॐनमो अस्तु रुद्रेभ्यो ये दिवि येषां वर्षमिषवस्तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वास्तेभ्यो नमो अस्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दधामि ॥१॥ ॐनमो अस्तु

रुद्रेभ्यो येऽन्तरिक्षे येषां वात इषवस्तेभ्यो दश० ॥२॥ ॐनमो अस्तु रुद्रेभ्यो ये पृथिव्यां येषामन्नमिषवस्तेभ्यो० ॥३॥ भवाय देवाय० पञ्चदशस्नानानि नमः ॥ ॐनमोदेवेभ्यः "कण्ठोपवीती" स्वाहा ऋषिभ्यः । "अपसव्येन" । स्वधा पितृभ्यः "सव्येन" आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं ब्रह्माण्डं सचराचरं जगत्तृप्यतु ॥३॥ एवमस्तु ॥ "फिर पात्रमें पानी 'ॐनमः शिवाय' इस मन्त्रसे सात वार मंत्रित करके अपने माथेतक लेके अमृतसे भराहुआ ध्यान करके देवके सिरपर छोडना । इह मन्त्रगुडक कहते हैं"॥ "आरात्रिका निकालना" गृह्णन्तु भगवद्भक्ता भूताः प्रासादबाह्यगाः । पञ्चभूताश्च ये भूतास्तेषामनुचराश्च ये । ते तृप्यन्तु वौषट् ॥ "देवके पादोंका पानी नेत्रोंके मलना"॥ भगस्य हृदयं लिङ्गं लिङ्गस्य हृदयं भगः । तस्मै ते भगलिङ्गाय उमारुद्राय वै नमः ॥ उत्तिष्ठ भगवञ्छम्भो उत्तिष्ठ गिरिजापते । उत्तिष्ठ त्रिजगन्नाथ त्रैलोक्ये मङ्गलं कुरु ॥ "शम्भू बिठाने जगाह फूल छोडछोड कर पडना" आसनाय नमः पद्मासनाय नमः । वृषभासनाय नमः ज्ञानासनाय नमः ॥ किमासनं ते वृषभासनाय किंभूषणं वासुकिभूषणाय । वित्तेशभृत्याय किमस्ति देयं वागीश किं ते वचनीयमस्ति ॥ "महिम्नःपारस्तोत्र पढते हुई देवको अनुलेपन चन्दनादिद्रव्योंसे करना" ॥ "वस्त्र पहनना" ॥ कालाग्निरुद्र सर्वज्ञ वरदाभयदायक । वस्त्रं गृहाण देवेश दिव्यवस्त्रोपशोभित । भवाय देवाय० वस्त्रं परिकल्पयामि नमः । "जन्यो पहनना" ॥ सुवर्णतारैरचितं दिव्ययज्ञोपवीतकम् । नीलकण्ठ मया दत्तं गृहाण

मदनुग्रहात् । भवाय दे० यज्ञोपवीतं परिकल्पयामि नमः ॥ "गन्ध चडाना" ॥ सर्वेश्वर जगद्वन्द्य दिव्यासनसुसंस्थित । गन्धं गृहाण देवेश दिव्यगन्धोपशोभितम् । भवाय० समालभनं गन्धो नमः । "अक्षत और फूल चडाना" ॥ सदाशिव शिवानन्द प्रधानकरणेश्वर । पुष्पाणि विल्वपत्राणि विचित्राणि गृहाण मे ॥ भवाय दे० । अनन्ताय नमः । सूक्ष्माय शिवोत्तमाय एकनेत्राय एकरुद्राय त्रिमूर्तये श्रीकण्ठाय शिखण्डिने नन्दिने महाकालाय नमः ॥ अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल । भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम् ॥ गणपतये नमः वृषभाय कुमाराय अम्बिकायै चण्डेश्वराय नमः । अभीष्ट० द्वितीयावर० ॥ इन्द्राय वज्रहस्ताय अग्नये शक्तिहस्ताय यमाय दण्डहस्ताय नैर्ऋतये खड्गहस्ताय वरुणाय पाशहस्ताय वायवे ध्वजहस्ताय कुबेराय गदाहस्ताय ईशानाय त्रिशूलहस्ताय ब्रह्मणे पद्महस्ताय विष्णवे चक्रहस्ताय नमः ॥ अभीष्ट० तृतीयाव० ॥ जयायै नमः विजयायै सुभगायै दुर्भगायै जयन्त्यै कुहिन्यै अपराजितायै करात्यै नमः ॥ अभीष्टसि० चतुर्था० ॥ सूर्याय नमः चन्द्रमसे भौमाय बुधाय बृहस्पतये शुक्राय शनैश्चराय राहवे केतवे ॥ अभीष्ट० पञ्चमा० ॥ अनन्तनागराजाय नमः वासुकिनाग० तक्षकना० पद्म० महापद्म० कार्कोट० शङ्खपाल० कुलिक० । अभीष्ट० षष्ठमाव० । वज्राय फट् नमः शक्तये फ० दण्डाय० खड्गाय० पाशाय० ध्वजाय० गदायै० त्रिशूलाय० पद्माय० चक्राय फट्नमः । अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल । भक्त्या समर्पये तुभ्यं सप्तमावरणार्चनम् ॥ शिवाय

पार्थिवेश्वरचिन्तामणये सपरिवाराय सानुचराय अर्घो नमः पुष्पं नमः ॥ "धूप चडाना" ॥ महादेव मृडानीश जगदीश निरञ्जन । धूपं गृहाण देवेश साज्यं गुग्गुलकल्पितम् ॥ भवाय० धूपं परिकल्पयामि नमः ॥ "रत्नदीप चडाना" ॥ हिरण्यबाहो सेनानीरोषधीनां पते शिव । दीपं गृहाण कर्पूर-कपिलाज्यत्रिवर्तिकम् । भवाय० रत्नदीपं परिकल्पयामि नमः ॥ मयूरपुच्छैर्देवेश शुभ्रैश्चामरकैस्तथा । ध्वजं छत्रं वीजनं च गृहाण परमेश्वर ॥ "जय सर्वेति चामरस्तोत्रों को पडके" । भवाय० चामरं परिकल्पयामि नमः ॥ "आईना दिखाना" ॥ यस्य दर्शनमात्रेण विश्वं दर्पणबिम्बवत् । तस्मै ते परमेशाय मकुरं कल्पयाम्यहम् ॥ भवाय० आदर्शं परिकल्पयामि नमः ॥ एताभ्यो देवताभ्यः दीपो नमः धूपो नमः ॥ शिवस्य सानुचरस्याऽर्घ्यदानाद्यऽर्चनविधिः सर्वः परिपूर्णोस्तु ॥ "मधु-पर्क देना" ॥ क्षीराज्यमधुसंमिश्रं शुभ्रदध्नासमन्वितम् । षड्रसैश्च समायुक्तं गृहाणान्नं निवेदये । भवाय० चरुं परिकल्पयामि नमः ॥ "फूलोंकी अञ्जलि चडावना" ॥ हर विश्वाखिलाधार निराधार निराश्रय । पुष्पाञ्जलिमिमं शम्भो गृहाण वरदो भव ॥ भवाय० पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि नमः ॥ "फल चडाना" ॥ राजराजाधिदेवेश निराधार निरास्पद । फलं गृहाण मद्दत्तं नारिकेलादिकं शुभम् । भवाय० फलं समर्पयामि नमः ॥ "ताम्बूल चडाना" ॥ शाश्वतात्मन्महानन्द मदनान्तक धूर्जटे । गृहाण पूगताम्बूलदलपत्रादिसंयुतम् । भवाय० ताम्बूलं परि० ॥ "आध प्रक्रम देना" ॥ यानि कानि च पापानि

ब्रह्महत्यादिकानिच । तानि सर्वाणि नश्यन्ति शिवस्यार्धप्रदक्षिणात् "षडक्षरपञ्चाक्षर स्तोत्र पडके अष्टाङ्ग प्रणाम देना" ॥ मृडानीशाद्य मे सर्वानऽपराधानऽनेकशः। क्षम स्वामिन्प्रणामं मे गृहाणाष्टाङ्गसंयुतम् ॥ उभाभ्यां जानुभ्यां पाणिभ्यां शिरसा उरसा मनसा वचसा च नमस्कारं करोमि नमः ॥ अन्नं नमः २ आज्यं २ अद्यादिनेऽद्य यथासङ्कल्पात्सिद्धिरस्तु अन्नहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं द्रव्यहीनं मन्त्रहीनं च यद्गतं तत्सर्वमऽच्छिद्रं सम्पूर्णमस्तु एवमस्तु ॥ शन्नो देवी० ॥ भवाय० अपोशानं नमः ॥ पुनः शन्नो देवी० ॥ भवाय० दक्षिणार्थे तिलहिरण्यरजतनिष्कर्णं ददानि ॥ एता देवताः सदक्षिणाऽनेन प्रीयन्तां प्रीताः सन्तु ॥ "नैवेद्य देना" ॥ अमृतेशमुद्रयाऽमृतीकृत्याऽमृतमस्तु अमृतायतां नैवेद्यं सावित्राणि सावित्रस्य देवस्यत्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यामादधे । भवाय० नमो नैवेद्यं निवेदयामि नमः ॥ आकाशमातृभ्यो बलिं नमः समालभनं गन्धो नमः ॥ अर्घो नमः ॥ पुष्पं नमः ॥ कर्पूरगौरं० भवाय० फलादि समर्पयामि नमः ॥ क्षां क्षेत्राधिपतयेऽन्नं नमः रां राष्ट्राधिपतयेऽन्नं नमः सर्वाभयवरप्रद मयि पुष्टिं पुष्टिपतिर्दधातु ॥ "नित्यकर्म करके पृच्छा करना" ॥ तन्महेशाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि तन्नः शिवः प्रचोदयात् ३ । ॐतत्सद्ब्रह्माऽद्य तावत्० भवस्य देवस्य० अच्छिद्रं सम्पूर्णमस्तु एवमस्तु ॥ एताभ्यो देवताभ्यो यवोदकं नम उदकतर्पणं नमः ॥ आपन्नोसि शरण्योसि सर्वाऽवस्थासु सर्वदा। भगवंस्त्वां प्रपन्नोसि रक्ष मां शरणागतम् । क्षमापणनिर्वाण-

स्तोत्रादि पठित्वा। आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनम्। पूजाभागं न जानामि क्षम्यतां परमेश्वर। उभाभ्यामिति अष्टाङ्ग-प्रणामं करोमि नमः॥ "तर्पण करना" नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्व-ग्नये नमः पृथिव्यै नम ओषधिभ्यः नमो वाचे नमो वाचस्पतये नमो विष्णवे बृहते कृणोमि। इत्येतासामेव देवतानां सलोकतां सायुज्यं सार्ष्टिं सामीप्यमाप्नोति य एवं विद्वान् स्वाध्याय-मधीते॥ पूजितोसि मया भक्त्या भगवन्गिरिजापते। सगौरीको मम स्वान्तं विश विश्रान्तिहेतवे॥ मनस्यान्तर्गतं मन्त्रं मन्त्र-स्यान्तर्गतं नमः। मनोमन्त्रमयं दिव्यमेकपुष्पं शिवार्चनम्॥ इति शिवपूजा सम्पूर्णा॥

अथ गणेशस्तवराजः॥

ॐविघ्नेशो नः स पायाद्विहृतिषु जलधिं पुष्कराग्रेण पीत्वा यस्मिन्नुद्धृत्य हस्तं वमति तदऽखिलं दृश्यते व्योम्नि देवैः। क्वाप्यम्भः क्वापि विष्णुः क्वचन कमलभूः क्वाप्यऽनन्तः क्व च श्रीः क्वाप्यौर्वः क्वापि शैलः क्वचन मणिगणः क्वापि नक्रादिसत्त्वाः॥ निर्विघ्नविश्वनिर्माणसिद्धये यदनुग्रहम्। मन्ये स वन्द्रे धातापि तस्मै विघ्नजिते नमः॥ सर्गारम्भेऽप्यजाताय बीजरूपेण तिष्ठते। धात्रा कृतप्रणामाय गणाधिपतये नमः॥ गणेशाय नमः प्रह्ववाञ्छिताम्बुजभानवे। सितदंष्ट्रांकुरस्फीतविघ्नौघतिमिरेन्दवे॥ प्रणमाम्यजमीशानं योगशास्त्रविशारदम्। निःशेषगणवृन्दस्य नायकं सुविनायकम्॥ "श्रीब्रह्मोवाच"॥ भगवञ्छ्रोतुमिच्छामि विस्तरेण यथायथम्। स्तवराजस्य माहात्म्यं स्वरूपं

च विशेषतः ॥ "श्रीनन्दिकेश्वर उवाच" ॥ स्तवराजस्य माहात्म्यं प्रवक्ष्यामि समासतः ॥ शृणुष्वावहितो भूत्वा सर्वसिद्धिकरं परम् । कर्मणा मनसा वाचा ये प्रपन्ना विनायकम् ॥ ते तरन्ति महाघोरं संसारं कामवर्जिताः ॥ सकृच्च जप्त्वा स्तवराजमुत्तमं तरत्यशेषं भवपाशपञ्जरम् । विमुच्यते संसृतिसागरान्नरो विभूतिमाप्नोति सुरैः सुदुर्लभाम् ॥ यत्फलं लभते जप्त्वा स्वरूपं चापि यादृशम् । यः प्रातरुत्थितो विद्वान्ब्राह्मे वापि मुहूर्तके । विषुवायनकालेषु पुण्ये वा समयान्तरे ॥ सर्वदा वा जपञ्जन्तुः स्तवराजं स्तवोत्तमम् । यत्फलं लभते मर्त्यः तच्छृणुष्व चतुर्मुख ॥ गङ्गाप्रवाहवत्तस्य वाग्विभूतिर्विजृम्भते ॥ बृहस्पतिसमो बुद्ध्या पुरन्दरसमः श्रिया । तेजसादित्यसङ्काशो भार्गवेण समो नये ॥ धनदेन समो दाने तथा वित्तपरिग्रहे । धर्मराजसमो न्याये शिवभक्तो मया समः ॥ प्रतापे वह्निसंकाशः प्रसादे शशिना समः । बलेन महता तुल्यो भवता ब्रह्मवर्चसे ॥ सर्वतत्वार्थविज्ञाने मयापि समतां व्रजेत् । एवमेतत्त्रिसन्ध्यं वै जपन्स्तवमनुत्तमम् ॥ सर्वान्कामान्नरः प्राप्य भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान् । सशरीरः सुरेन्द्रस्य पदं न्यस्यति मूर्धनि ॥ प्राप्याष्टगुणमैश्वर्यं भुक्त्वा भोगान्सुपुष्कलान् । अक्षयो वीतशोकश्च निरातङ्को निरामयः ॥ जरामरणनिर्मुक्तो वेदशास्त्रार्थकोविदः । सिद्धचारणगन्धर्वदेवविद्याधरादिभिः ॥ संस्तूयमानो मुनिभिः शंस्यमानो दिनेदिने । विचरत्यऽखिलांल्लोकान्बन्धुवर्गैः समं नरः ॥ एवं चिराय निर्वाह्य देवस्यानुचरो भवेत् । स्तवराजं सकृज्जप्त्वा मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ॥ सर्वसिद्धि-

मवाप्नोति पुनात्यासप्तमं कुलम् । नाशयेद्विघ्नसंघातांस्तेन वैनायकं स्मृतम् ॥ स्तवराजमनुस्मरञ्जपन्हृदयाग्रे विलिखन्पठन्नपि । स सुरासुरसिद्धचारणैर्मुनिभिः प्रत्यहमेव पूज्यते ॥ तरति च भवचक्रं सर्वमोहं निहन्ति क्षिपति च परवादं मान्यते बन्धुवर्गैः । अखिलमपि च लोकं क्षेमतामाशु नीत्वा व्रजति यतिभिरीड्यं शाश्वतं धाम मर्त्यः ॥ यो जपति स्तवराजमशोकः क्षेमतमं पदमेति मनुष्यः । चारणसिद्धसुरैरभिवन्द्यो याति पदं परमं स विमुक्तः ॥ जपेद्यः स्तवराजाख्यमिमं प्रातः स्तवोत्तमम् । तस्यापचारं क्षमते सर्वदैव विनायकः ॥ सर्वान्निहन्ति वै विघ्नान्विपदश्च समन्ततः । अशेषाभिर्गणाध्यक्षः सम्पद्भिरभिषिञ्चति ॥ अस्य च प्रणता लक्ष्मीः कटाक्षानुविधायिनी । किं करोमीति वै भीत्या पुरस्तादेव तिष्ठति ॥ तस्मान्निःश्रेयसं गन्तुमतिभक्त्या विचक्षणः । स्तवराजं जपेज्जन्तुर्धर्मकामार्थसिद्धये ॥ आधिव्याध्यस्त्रशस्त्राग्नितपःपङ्कार्णवादिषु । भयेष्वन्येषु चाप्येतत्स्मरन्मुक्तो भवेन्नरः ॥ स्तवराजं सकृज्जप्त्वा मार्गं गच्छति मानवः । न जातु जायते तस्य चौरव्याघ्रादिभिर्भयम् ॥ यथा वरिष्ठो देवानामशेषाणां विनायकः । तथा स्तवो वरिष्ठोयं स्तवानां शम्भुनिर्मितः ॥ अवतीर्णो यदा देवो विघ्नराजो विनायकः । तदा लोकोपकारार्थं प्रोक्तोयं शम्भुना स्वयम् ॥ विनायकप्रियकरो देवस्य हृदयङ्गमः । जप्यः स्तवोयं यत्नेन धर्मकामार्थसिद्धये ॥ "अस्य श्रीमहागणपतिस्तवराजमन्त्रस्य ईश्वर ऋषिः, नानावृत्तानि छन्दांसि विनायको देवता तत्पुरुष इति बीजं एकदन्त इति शक्तिः आ-

त्मनो वाङ्मनःकायोपार्जितपापनिवारणार्थं धर्मार्थ-कामसिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगः” ॥ ध्यानं ॥ जेतुं यस्त्रिपुरं हरेण हरिणा व्याजाद्बलेर्बन्धने स्रष्टुं वारिरुहोद्भवेन विधिना शेषेण धर्तुं धराम् । पार्वत्या महिषासुरप्रमथने सिद्धाधिपैर्मुक्तये ध्यातः पञ्चशरेण लोकविजये पायात्स नागाननः ॥ ॥ “ईश्वर उवाच” ॥ ॐकारममृतं ब्रह्म शिवमक्षरमव्ययम् । यमामनन्ति वेदेषु तं प्रपद्ये विनायकम् ॥ यतः प्रवृत्तिर्जगतां यः साक्षी हृदयस्थितः । आधारभूतो विश्वस्य तं प्रपद्ये विनायकम् ॥ यस्य प्रसादाच्छक्राद्याः प्राणन्ति निमिषन्ति च । प्रवर्तकं तं लोकानां प्रणमामि विनायकम् ॥ शिखाग्रे द्वादशाङ्गुल्ये स्थितं सूक्ष्मतनुं विभुम् । युञ्जन्ति यं मरीच्याद्यास्तं नमामि गणाधि-पम् ॥ लीलया लोकरक्षार्थं द्विधाभूतो महेश्वरः । यः स्वयं जगतः साक्षी तं वन्दे द्विरदाननम् ॥ विघ्नेश्वरं विधातारं धातारं जगतामपि । प्रणमामि गणाध्यक्षं प्रणतार्तिविनाशनम् ॥ उत्सङ्गतल्पे यो देव्या भवान्याः क्रीडते विभुः । बालो हरन्म-नस्तस्यास्तं प्रपद्ये विनायकम् ॥ विधाय भूषणैश्चित्रैर्वेशकर्म मनोरमम् । यं दृष्ट्वा पश्यतीशानी तं प्रपद्ये विनायकम् ॥ संक्रीडते महा-लीलया यः सृजंल्लोकान्भिन्दन्नपि मुहुर्मुहुः । संक्रीडते महा-सत्वस्तं नतोस्मि गणाधिपम् ॥ सिन्दूरितमहाकुम्भस्तुङ्गदन्तः सुभैरवः । भिनत्ति दैत्यकरिणस्तं वन्दे द्विरदाननम् ॥ यस्य मर्ति व्रजन्त्याशु मदामोदानुषङ्गिणः । भ्रमरास्तीव्रसंरावास्तं मामि विनायकम् ॥ गम्भीरभीमनिनदं श्रुत्वा यद्बृंहितं [illegible]म् । पतन्त्यसुरनागेन्द्रास्तं वन्दे द्विरदाननम् ॥ यो भि-

नत्ति गिरीन्सर्वान्घोरनिर्घातभैरवैः । रवैः सन्त्रासजननैस्तं वन्दे द्विरदाननम् ॥ लीलया प्रहता येन पादाभ्यां धरणी क्षणात् । संशीर्यते सशैलौघा तं वन्दे चण्डविक्रमम् ॥ यत्करातार्डनैर्भि-न्नमम्भः शतसहस्रधा । विशीर्यते समुद्राणां तं नतोस्मि गणा-धिपम् ॥ विमुखा यत्र दृश्यंते भ्रष्टवीर्याः पदच्युताः । निष्प्रभा विबुधाः सद्यस्तं प्रपद्ये विनायकम् ॥ यद्भ्रूप्रणिहितां लक्ष्मीं लभन्ते वासवादयः । स्वतन्त्रमेकं नेतारं विघ्नराजं नमाम्यहम् ॥ यत्पादपांसुनिचयं बिभ्राणा मणिमौलिषु । अमरा बहु मन्यन्ते तं नतोस्मि गणाधिपम् ॥ वेदान्तगीतं पुरुषं वरेण्यमऽभयप्र-दम् । हिरण्मयपुरान्तःस्थं तमस्मि शरणं गतः ॥ चित्सुधा-नन्दसन्मात्रं परानन्दस्वरूपिणम् । निष्कलं निर्मलं साक्षाद्विना-यकमुपैमि तम् ॥ अनपायं च सद्भूतं भूतिदं भूतिवर्धनम् । नमामि सत्यविज्ञानमनन्तं ब्रह्मरूपिणम् ॥ अनाद्यन्तं महादेव-प्रियपुत्रं मनोरमम् । द्विपाननं विभुं साक्षादात्मानं तं नमाम्यहम् ॥ विश्वामरेश्वरैर्वन्द्यमाधारं जगतामपि । प्रणमामि गणाध्यक्षं प्रणताज्ञानमोचनम् ॥ शिखाग्रे द्वादशाङ्गुल्ये स्थितं स्फटिकस-न्निभम् । गोक्षीरधवलाकारं प्रणमामि गजाननम् ॥ अनाधारं नवाधारमनन्ताधारसंस्थितम् । धातारं च विधातारं तमस्मि शरणं गतः ॥ अनन्तदृष्टिं लोकादिमनन्तं विद्रुमप्रभम् । अप्रत-र्क्यमनिर्देश्यं निरालम्बं नमाम्यहम् ॥ भूतालयं जगद्योनिमणी-यांसमणोरपि । स्वसंवेद्यमसंवेद्यं वेद्यावेद्यं नमाम्यहम् ॥ प्रमाण-प्रत्ययातीतं हंसमव्यक्तलक्षणम् । अनाविलमनाकारं तमस्मि शरणं गतः ॥ विश्वाकारमनाकारं विश्वावासमनामयम् । सकलं निष्कलं

नित्यं नित्यानित्यं नमाम्यहम् ॥ संसारवैद्यं सर्वज्ञं सर्वभेषज-भेषजम् । आत्मानं सदसद्व्यक्तं धातारं प्रणमाम्यहम् ॥ भ्रूमध्ये संस्थितं देवं नाभिमध्ये प्रतिष्ठितम् । हृन्मध्ये दीपवत्संस्थं वन्दे सर्वस्य मध्यगम् ॥ हृत्पुण्डरीकनिलयं सूर्यमण्डलनिष्ठितम् । तार-कान्तरसंस्थानं तारकं तं नमाम्यहम् ॥ तेजस्विनं विकर्तारं सर्व-कारणकारणम् । भक्तिगम्यमहं वन्दे प्रणवप्रतिपादितम् ॥ अन्तर्योगरतैर्युक्तैः कल्पितैः स्वस्तिकासनैः । वद्धं हृत्कर्णिका-मध्ये ध्यानगम्यं नमाम्यहम् ॥ ध्येयं दुर्ज्ञेयमद्वैतं त्रयीसारं त्रिलोचनम् । आत्मानं त्रिपुरारातेः प्रियसूनुं नमाम्यहम् ॥ स्कन्दप्रियं स्कन्दगुरुं स्कन्दस्याग्रजमेव च । स्कन्देन सहितं शश्वन्नमामि स्कन्दवत्सलम् ॥ नमस्ते विघ्नराजाय भक्तविघ्नविना-शिने । विघ्नाध्यक्षाय विघ्नानां निहन्त्रे विश्वचक्षुषे ॥ विघ्नदात्रेऽ-प्यभक्तानां भक्तानां विघ्नहारिणे । विघ्नेश्वराय वीराय विघ्नेशाय नमोनमः ॥ कुलाद्रिमेरुकैलासशिखराणां प्रभेदिने । दन्तभि-न्नाभ्रमालाय करिराजाय ते नमः ॥ किरीटिने कुण्डलिने मालिने हारिणे तथा । नमो मौञ्जीसनाथाय जटिने ब्रह्मचा-रिणे ॥ डिण्डिमुण्डाय चण्डाय कमण्डलुधराय च । दण्डिने चैव मुण्डाय नमोऽध्ययनशीलिने ॥ वेदाध्ययनयुक्ताय सामगान-पराय च । त्र्यक्षाय च वरिष्ठाय नमश्चन्द्रशिखण्डिने ॥ कपर्दिने करालाय शंकरप्रियसूनवे । सुताय हैमवत्याश्च हर्त्रे च सुरविद्वि-षाम् ॥ ऐरावणादिभिर्दिव्यैर्दिग्गजैः संस्तुताय च । स्वबृंहित-रित्रस्तैर्नमस्ते मुक्तिहेतवे ॥ कूष्माण्डगणनाथाय गणानां तये नमः । वज्रिणाराधितायैव वज्रिवज्रनिवारिणे ॥ पूर्णो

दन्तभिदे साक्षान्महतां भीषणाय च । ब्रह्मणश्च शिरोहर्त्रे विव-स्वद्बन्धनाय च ॥ अग्नेश्चैव सरस्वत्या इन्द्रस्य च बलच्छिदे । भैरवाय सुभीमाय भयानकरवाय च ॥ विभीषणाय भीष्माय नागाभरणधारिणे । प्रमत्ताय प्रचण्डाय वक्रतुण्डाय ते नमः ॥ हेरम्बाय नमस्तुभ्यं प्रलम्बजठराय च । आखुवाहाय देवाय चैक-दन्ताय ते नमः ॥ शूर्पकर्णाय शूराय परश्वधधराय च । सृणिहस्ताय धीराय नमः पाशासिपाणये ॥ धारणाय नम-स्तुभ्यं धारणाभिरताय च । धारणाभ्यासयुक्तानां पुरस्तात्सं-स्तुताय च ॥ प्रत्याहाराय वै तुभ्यं प्रत्याहाररताय च । प्रत्या-हाररतानां च प्रत्याहारस्थितात्मने ॥ विघ्नाध्यक्षाय दक्षाय लोकाध्यक्षाय धीमते । भूताध्यक्षाय भव्याय गणाध्यक्षाय ते नमः ॥ योगपीठान्तरस्थाय योगिने योगधारिणे । योगिनां हृदिसंस्थाय योगगम्याय ते नमः ॥ ध्यानाय ध्यानगम्याय शिवध्यानपराय च । ध्येयानामपि ध्येयाय नमो ध्येयतमाय च ॥ सप्तपातालपादाय सप्तद्वीपोरुजंघिने । नमो दिग्बाहवे तुभ्यं व्योमदेहाय ते नमः ॥ सोमसूर्याग्निनेत्राय ब्रह्मविद्याम-दाम्भसे । ब्रह्माण्डकुण्डपीठाय सामघोषस्वनाय च ॥ ज्योति-र्मण्डलपुच्छाय हृदयालानकाय च । ध्यानार्द्रबद्धपादाय पूजाधोरणधारिणे ॥ सोमार्कबिम्बघण्टाय दिक्करीन्द्रवियोगिने । आकाशसरसो मध्ये क्रीडागहनशालिने ॥ सुमेरुदन्तकोशाय पृथिवीस्थलगाय च । सुघोषाय सुभीमाय सुरकुञ्जरभेदिने ॥ हेमाद्रिकूटभेत्रे च दैत्यदानवमर्दिने । गजाकाराय देवाय गज-राजाय ते नमः ॥ ब्रह्मणे ब्रह्मरूपाय ब्रह्मगोत्रेऽव्ययाय च । ब्रह्मणे

ब्राह्मणायैव ब्रह्मणः प्रियबन्धवे ॥ यज्ञाय यज्ञगोत्रे च यज्ञानां फलदायिने । यज्ञहर्त्रे यज्ञकर्त्रे सर्वयज्ञमयाय च ॥ सर्वनेत्राधिवासाय सर्वैश्वर्यप्रदायिने । गुहाशयाय गुह्याय योगिने ब्रह्मवादिने ॥ १०० ॥ "ॐ गंतत्पुरुषाय विद्महे, वक्रतुण्डाय धीमहि, तन्नो दन्ती प्रचोदयात्" । ३ । एकाक्षरपरायैव मायिने ब्रह्मचारिणे । भूतानां भुवनेशानां पतये पापहारिणे ॥ सर्वारम्भनिहर्त्रे च विमुखानां निजार्चने । नमो नमो गणेशाय विघ्नेशाय नमो नमः ॥ विनायकाय वै तुभ्यं विकृताय नमोनमः । नमस्तुभ्यं जगद्धात्रे नमस्तुभ्यं वियोगिने ॥ नमस्तुभ्यं त्रिनेत्राय त्रिनेत्रप्रियसूनवे । सप्तकोटिमहामन्त्रैर्मन्त्रितावयवाय ते ॥ मन्त्राय मन्त्रिणां नित्यं मन्त्राणां फलदायिने । लीलया लोकरक्षार्थं विभक्तनिजमूर्तये ॥ स्वयं शिवाय देवाय लोकक्षेमानुपालिने । नमोनमः क्षमाभर्त्रे नमः क्षेमतमाय च ॥ दयामयाय देवाय सर्वभूतदयालवे । दयाकर दयारूप दयामूर्ते दयापर ॥ दयाप्राप्य दयासार दयाकृतिरतात्मक । जगतां तु दयाकर्त्रे सर्वकर्त्रे नमो नमः ॥ नमः कारुण्यदेहाय वीराय शुभदन्तिने । भक्तिगम्याय भक्तानां दुःखहर्त्रे नमोस्तु ते ॥ त्रिपुरं दग्धुकामेन पूजिताय त्रिशूलिना । दयाशील दयाहार दयापर नमोस्तु ते ॥ नमः समस्तगीर्वाणवन्दिताङ्घ्रियुगाय ते । जगतां तस्थुषां भर्त्रे विघ्नहर्त्रे नमोस्तु ते ॥ नमो नमस्ते गणनायकाय सुनायकायाखिलनायकाय । विनायकायाभयदायकाय नमः शुभानामुपनायकाय ॥ गणाधिराजाय गणानुशास्त्रे गजाधिराजाय गजाननाय । शताननायामितमाननाय नमो नमो दैत्यविना-

शनाय ॥ अनामयायामलधीमयाय स्वमायया विष्टजगन्मयाय । अमेयमायाविकसन्मयाय नमो नमस्तेस्तु मनोमयाय ॥ नमस्ते समस्ताधिनाथाय कर्त्रे नमस्ते समस्तोरुविस्तारभाजे । नमस्ते समस्ताधिकायातिभूम्ने नमस्ते पुनर्व्यस्तविन्यस्तधाम्ने ॥ पात्रे सुराणां प्रमथेश्वराणां शास्त्रेऽनुशास्त्रे सचराचरस्य । नेत्रे प्रनेत्रे च शरीरभाजां धात्रे वराणां भवते नमोऽस्तु ॥ नमोस्तु ते विघ्नविनाशकाय नमोस्तु ते भक्तभयापहाय । नमोस्तु ते मुक्तमनस्थिताय नमश्च भूयो गणनायकाय ॥ अखिलभुवनभर्त्रे सम्पदामेकदात्रे निखिलतिमिरभेत्रे निष्कलायाव्ययाय । प्रणतमनुजगोप्त्रे प्राणिनां त्राणकर्त्रे सकलविबुधशास्त्रे विश्वनेत्रे नमोऽस्तु ॥ दशनकुलिशभिन्नैर्निर्गतैर्दिग्गजानां विलसितशुभदन्तं मौक्तिकैश्चन्द्रगौरैः । भवनमुपसरन्तं प्रेक्ष्य गौरी भवन्तं सुदृढमथ कराभ्यां श्लिष्यते प्रेमनुन्ना ॥ मृदुनि ललितशीते तल्परङ्गे भवान्याः शुभविलसितभावां नृत्यलीलां विधाय । अचलदुहितुरङ्कादङ्कमन्यं विसर्पन्पितुरुपहरसि त्वं नृत्यहर्षोपहारम् ॥ भुजगवलयितेनोपस्पृशन्पाणिना त्वां सरभसमथ बाह्वोरन्तराले निवेश्य कलमधुरसुगीतं नृत्तमालोकयंस्ते कलमऽविकलतालं चुम्बते हस्तपद्मे ॥ कुवलयशतशीतैर्भूरिकल्हारहृद्यैस्तव मुहुरपि गात्रस्पर्शनैः संप्रहृष्यन् । क्षिपति च सुविशाले स्वाङ्कमध्ये भवन्तं तव मुहुरनुरागान्मूर्ध्नि जिघ्रन्महेशः ॥ बालो बालपराक्रमः सुरगणैः संप्रार्थ्यसेऽहर्निशं गायन्किंपुरुषाङ्गनाविरचितैः स्तोत्रैरभिष्टूयसे । हाहाहूहुकतुम्बुरुप्रभृतिभिस्त्वं गीयसे नारदस्तोत्रैरद्भुतचेष्टितैः प्रतिदिनं प्रोद्घोषते सामभिः ॥ त्वां नमन्ति सुरसिद्धचारणास्त्वां यजन्ति निखिला द्विजातयः । त्वां पठन्ति

ाः पुराविदस्त्वां स्मरन्ति यतयः सनातनाः ॥ परं पुराणं
ं महान्तं हिरण्मयं पुरुषं योगगम्यम् । यमामनन्त्यात्म-
 मनीषिणो विपश्चितं कविमप्यक्षयं च ॥ गणानान्त्वा
ाथं सुरेन्द्रं कविं कवीनामतिमेध्यविग्रहम् । ज्येष्ठराजमृषभं
केतुमेकमा नः शृण्वन्नूतिभिः सीद शश्वत् ॥ नमो नमो वाङ्मनसा-
तिभूमये नमो नमो वाङ्मनसैकभूतये । नमो नमोनन्तसुखैकदा-
यिने नमो नमोनन्तसुखैकसिन्धवे ॥ नमो नमः शाश्वतशान्तिहे-
तवे क्षमादयापूरितचारुचेतसे । गजेन्द्ररूपाय गणेश्वराय ते
परस्य पुंसः प्रथमाय सूनवे ॥ नमो नमः कारणकारणाय ते
नमो नमो मङ्गलमङ्गलात्मने । नमो नमो वेदविदां मनीषिणा-
मुपासनीयाय नमो नमो नमः ॥ १३० ॥ "श्रीईश्वर
उवाच" ॥ वैनायकं स्तवं पुण्यं सर्वपापप्रणाशनम् । चिन्ता-
...प्रशमनमायुरारोग्यवर्धनम् ॥ नृपाणां सततं रक्षा द्विजानां
 विशेषतः । स्तवराज इति ख्यातं सर्वसिद्धिकरं परम् ॥ यः
 च्छृणुयाद्वापि सर्वपापैः प्रमुच्यते । रूपं वीर्यं बलं प्रज्ञां यशश्चायुः
न्वितम् ॥ मनीषां सिद्धिमारोग्यं श्रियमप्यक्षयिष्णुताम् । सर्व-
ोकाधिपत्यं च सर्वदेवाधिराजताम् ॥ प्राप्याष्टगुणमैश्वर्यं प्राप्य
 तिं च शाश्वतीम् । उद्धृत्य सप्तमं वंशं दुस्तराद्भवसागरात् ॥
श्वनेन विमानेन शतनागायुतेन च । विचरत्यखिलांल्लोकान्स-
ो गणाधिपः ॥ मत्प्रियश्च भवेन्मर्त्यः सर्वदेवप्रियः सदा ।
ो विनायकस्यापि प्रियोस्माकं विशेषतः ॥ सङ्कल्पसिद्धः
ः सर्वभूतहिते रतः । स्तवराजं जपन्मर्त्यः सुहृद्भिः सह
 ॥ स्तवराजजपासक्तभावयुक्तस्य धीमतः । अस्मिञ्जगत्त्रये-
...ाध्यं न च दुष्करम् ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन स्तवराजं